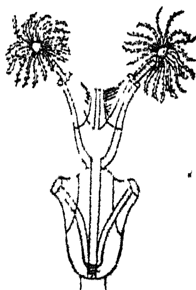
मधुमेह चिकित्सा

(DIABETES CURE)

लेखक–कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय



प्रकाशक

महेन्द्र रसायनशाला

कटरा, इलाहाबाद

इस पुस्तक के सहारे जो लोग इलाज करना चाहें उनके
लिए यह आवश्यक और लाभदायक होगा कि
पुस्तक को आरम्भ से अन्त तक दो-तीन बार
अच्छी तरह पढ़कर विषय को समझ लें
और तब इलाज आरम्भ करें।

ఆయుర్వేదం

मधुमेह-चिकित्सा

మధుమేహ చికిత్స

DIABETES-CURE

लेखक

कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय

प्रकाशक

महेन्द्र रसायन शाला

कटरा, इलाहाबाद

प्रथम बार, १०००] १९४७ [मूल्य ।=)

मधुमेह-चिकित्सा

मधुमेह या डायबिटीज़ का वर्णन

डायबिटीज़ इनसिपिडस (Diabetes Insipidus)

प्रमेह को एलोपैथ डायबिटीज़ कहते हैं। डायबिटीज़ से प्रमेह सम्बन्धी सभी रोगों का बोध नहीं होता। केवल बहुमूत्र और इक्षुमेह या मधुमेह का ही बोध होता है। यह डायबिटीज दो तरह का होता है, एक में पेशाब में चीनी आती है, दूसरे में चीनी नहीं आती। जिस डायबिटीज़ में चीनी आती है वह बहुत दुखदायी होता है और कठिनता से जाता है। डायबिटीज़ के नाम से अक्सर उसी का बोध होता है।

जिस डायबिटीज़ में चीनी नहीं आती उसमें पेशाब का रंग पानी की तरह होता है, पेशाब बहुत अधिक मात्रा में बारबार होता है। अधिक शारीरिक परिश्रम के कारण यह रोग अकसर हुआ करता है, परन्तु स्नायुओं की कमजोरी इस रोग की जननी है। मस्तिष्क और मेरुदण्ड की स्नायु के खराब और कमजोरी के कारण ही यह रोग होता है। अधिक चिन्ता और मानसिक परिश्रम के कारण भी यह रोग होता है।

इस रोग में पेशाब अधिक मात्रा में और बार बार होता है, पेशाब का रंग पानी जैसा होता है उसमें चीनी वगैरह कुछ नहीं होती है। यह बहुमूत्र का रोग है, इसी को मूत्रातिसार भी कुछ लोग कहते हैं। मूत्रातिसार या बहुमूत्र के वर्णन में हमने इस विषय पर विचार करने का प्रयत्न किया है। उदकमेह में भी बहुत कुछ लिखा गया है। इस रोग में भी रोगी कमजोर हो जाता है।

चिकित्सा

इस रोग को आराम करने के लिए शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का विश्राम बहुत आवश्यक है। रोगी को एकदम आराम देना चाहिए। उसके मन की चिन्ताएँ और फिक्र दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। और प्रसन्न रखना चाहिए। गहरी सांस लेने का अभ्यास करना चाहिए। गहरी सांस सदैव खुली हवा में लेना चाहिए और इसके लिए सब से उपयुक्त समय प्रातःकाल है। सूर्यस्नान और वायु स्नान बहुत ही आवश्यक होते हैं। सप्ताह में दो तीन दिन सूखी मालिश अथवा तेल को मालिश करनी चाहिए। प्रातःकाल और सायंकाल खुली वायु में टहलना बहुत गुणकारी होता है।

आरम्भ में रोग की अवस्था देखकर ४ दिनों से लेकर १० दिनों तक के उपवास की आवश्यकता रहती है। उपवास में सन्तरे का रस या ऐसे पतले रस वाले फलों का रस लेना चाहिए। घंटे घंटे भर पर गरम जल में नीबू का रस डाल कर पीना चाहिए। प्रतिदिन शाम को गरम पानी का एनिमा लेना चाहिए। उपवास का समय समाप्त होने पर फलाहार आरम्भ करना चाहिए। इस प्रमेह में केला शहद के साथ खाने से बड़ा लाभ रहता है आँवले का रस शहद के साथ खाने से भी लाभ करता है। अतः फलों में केला और आँवले को प्रधानता दी जानी चाहिए। मोसमी फल खाये जा सकते हैं। नासपाती सेब, नाख, सन्तरे, नीबू, अमरूद ये सभी लाभदायक होंगे।

किशमिश, अंजीर, छुहारे, ये भी इस प्रमेह में लाभ पहुँचाते हैं परन्तु इनको कम खाना चाहिए।

परवल, करेला, गोभी, गाजर, टमाटर आदि तरकारियाँ उबाल कर खानी चाहिए। फलाहार करते समय एक बार एक ही फल खाना चाहिए और दिन भर में तीन बार से अधिक न

खाना चाहिए। इस नियम का पालन कठोरता के साथ करने की आवश्यकता पड़ती है। फलाहार के समय कुछ दूध लिया जा सकता है। परन्तु स्टार्च और चीनी एकदम बन्द कर देने की आवश्यकता रहती है। फलाहार करते समय भी गरम पानी का एनिमा लेते रहना चाहिए।

१०-१५ दिन या जितने दिनों की आवश्यकता हो फलाहार करके रोटी आरम्भ करनी चाहिए। रोटी पर एकदम नहीं आ जाना चाहिए बल्कि धीरे-धीरे आना चाहिए। रोटी जव की खानी चाहिए। जव की रोटी और ऊपर बताई हुई कोई तरकारी उबली हुइ ली जा सकती है। तरकारियों में किसी भी तरह का मसाला नहीं पड़ना चाहिए। जो लोग मसाले बिना न रह सकें वे धनिया, जीरा, हल्दी, नमक और बहुत ही कम काली मिर्च को कभी-कभी-थोड़ी मात्रा में डाल सकते हैं। रोटी केवल दोपहर को खानी चाहिए और शाम को फलाहार करना चाहिए और थोड़ी मात्रा में दूध लेना चाहिए। प्रातःकाल यदि नाश्ते की आवश्यकता हो तो किसी मौसमी फल अथवा किशमिश और अंजीर आदि का ही नाश्ता करना चाहिए। यदि इच्छा हो तो जव में उसका आठवाँ हिस्सा चने का आटा भी मिलाया जा सकता है। रोटी का आहार लेते समय भी गरम पानी का एनिमा लेना आवश्यक होता है।

एक मास तक रोटी और फल का आहार करने के बाद यदि रोग शेष रह गया हो तो फिर उपवास आरम्भ करना चाहिए और जो क्रम ऊपर बताया गया है उसे पूरा दुहरा देना चाहिए। रोग की अवस्था के अनुसार एक बार अथवा दो तीन बार इस पूरे क्रम को दुहराने की आवश्यकता पड़ती है। कभी-कभी किसी-किसी को और अधिक दिनों तक इस क्रम को दुहराना पड़ता है।

प्रमेह में ब्रह्मचर्य-व्रत की बड़ी आवश्यकता रहती है। हिप बाथ और सिट्स-बाथ प्रायः प्रतिदिन लेना पड़ता है। ठंडे जल का स्नान प्रमेह मात्र के लिए उपयोगी है इसे न भूलना चाहिए। सप्ताह में कम से कम चार दिन सूखा घर्षण स्नान करने की जरूरत पड़ती है। सप्ताह में एक दिन या दो दिन गरम जल में एक चम्मच सेंधा नमक डाल कर उस जल से स्नान करना चाहिए।

खटाई, मिर्चा, मसाला, अचार, चटनी, सिरका, गरम पदार्थ और चीनी और स्टार्चवाली चीजें एकदम बन्द कर देनी चाहिए।

मधुमेह
(Diabetes mellitus)
कारण और लक्षण

जब भोजन आँतों में पच जाता है तब वह अन्तिम पाचन के लिए अथवा रक्त बनने के लिए एक नस द्वारा जो इसी काम के लिए है लिवर या यकृत में भेज दिया जाता है। वहाँ वह रस रक्त बनता है। इसी बात को आयुर्वेद यों कहता है कि भोजन से जो रस बनता है वह यकृत में रंजक पित्त द्वारा रंगा जाता है और रक्त बनता है।

जो कार्बोहाइड्रेट (स्टार्च और चीनी) हम अपने भोजन में लेते हैं उसका भी रस खिच कर यकृत में जाता है क्योंकि यकृत में भोजन का सार अंश ही भेजा जाता है, उसकी सीठी तो आँतों में ही अलग हो जाती है। वह कार्बोहाइड्रेट हमारे रक्त में सीधे नहीं मिलता। उसको रक्त में मिलने लायक चीनी में बदलना पड़ता है। रक्त में मिलने लायक चीनी में बदलने का काम लिवर करता है और चूंकि रक्त लिवर में ही

बनता है इसलिए जितनी चीनी की आवश्यकता रक्त में रहनी है, उतनी ही चीनी रक्त में मिलती है जो चीनी रक्त में मिलती है वह घुलन शील होती है। जो चीनी रक्त में मिलने से फाजिल पड़ती है वह अनघुल चीनी में बदल दी जाती है, यह काम भी लिवर को ही करना पड़ता है। इस अनघुल चीनी को वैज्ञानिक भाषा में ग्लाइकोजेन (Glycogen) कहते हैं। यह ग्लाइकोजेन लिवर के कोषों में जमा हो जाता है। जब हमें भूख लगती है और हम भोजन नहीं करते अथवा उपवास के दिनों में शरीर की शक्ति कायम रखने के लिए शरीर को कार्बो-हाइड्रेट की जरूरत पड़ती है तव लीवर उसी ग्लाइकोजेन को फिर घुलन शील चीनी में बदल कर रक्त में मिला देता है और शरीर की शक्ति कायम रहती है।

जब लिवर कमजोर हो जाता है और अपना काम अच्छी तरह नहीं कर पाता तब इस कमजोरी के कारण रक्त में जितनी चीनी की जरूरत रहती है उससे ज्यादा चीनी मिल जाती है और जब यह रक्त गुरदे में छनने के लिए जाता है तब फालतू चीनी अलग कर दी जाती है यह चीनी ग्लूकोज होती है। इसीलिए पेशाब में पाई जाने वाली चीनी भी ग्लूकोज ही होती है। इसीलिए डाक्टर लोग पेशाब में चीनी जाने के रोग को ग्लूकोजयूरिया या ग्लूकोसूरिया भी कहते हैं।

पैनक्रियास का विकार

पैनक्रियाटिक रस या इनसूलिन का प्रभाव जब स्टार्च पर नहीं पड़ता और अनपची चीनी जब लीवर में भेज दी जाती है तब वह अपनी कमजोरी के कारण अनपची अवस्था में ही उसे रक्त में डाल देता है और वह चीनी गुरदे से छनकर पेशाब में आ जाती है। वस्तुतः पैनक्रियास और लीवर दोनों ही यंश

जब खराब हो जाते हैं तभी मधुमेह या डायबिटीज नामक रोग होता है। साथ ही स्नायुओं की कमजोरी भी इस रोग के बढ़ाने में सहायक होती है।

The pancreas secretes a haromone called insulin, which regulates the oxidation of sugar for the use of muscle cells. In man, the deficiency of insulin causes "Diabetes" a wasting disease in which the unused sugar is passed out with urine.

अर्थात् पैनक्रियास से एक प्रकार का रस निकलता है उसे इनसूलिन कहते हैं। इस रस से चीनी और स्टार्च पचता है। और रक्त में मिलने लायक बनता है। इनसूलिन की कमी से ही मधुमेह हो जाता है क्योंकि चीनी का पाचन नहीं होता। तभी पेशाब में चीनी आने लगती है।

डायबिटीज़ का रोगी जो कुछ स्टार्च या कार्बोहाइड्रेट खाता है, वह रक्त में मिलता नहीं बल्कि रक्तबहा नालियों में में फेंक दिया जाता है। उसका कोई भी उपयोग शरीर नहीं कर पाता है। इससे शरीर को कोई शक्ति नहीं मिलती। यही चीनी पेशाब में आ जाती है। कुछ लोगों की हालत यहाँ तक बिगड़ जाती है कि रोगी यदि स्टार्च खाना बन्द कर दे तो जो प्रोटीन या वसा वह खाता है उसी की चीनी बन जाती है। और पेशाब में चीनी जाना जारी रहता है। यह जरूर है कि प्रोटीन से चीनी उतनी अधिक मात्रा में नहीं बनती जितनी स्टार्च से बनती है और एक निश्चित मात्रा तक ही सीमित रहती है। यह रोग की बढ़ी हुई दशा है।

दो प्रकार के रोगी

इस मर्ज के रोगी दो तरह के पाये जाते हैं। पहली श्रेणी

में वे लोग हैं जिनको भूख अधिक नहीं लगती और प्यास की भी बेचैनी नहीं रहती। इनकी भूख और प्यास साधारण रहती है। इनके पेशाब में चीनी भी अधिक परिमाण में नहीं निकलती। यह अवस्था उन लोगों की होती है जिनको यह रोग अधेड़ अवस्था के बाद होता है।

दूसरी श्रेणी में जो लोग आते हैं उनको भूख बहुत लगती है, प्यास भी अधिक लगती है, खूब खाते हैं और इनके पेशाब में चीनी भी बहुत अधिक मात्रा में आती है। यह अवस्था उन लोगों की होती है जिनको युवावस्था में या इससे भी पहले यह रोग हो जाता है।

ऊपर जो दो भेद बताये गये हैं वे नियमानुकूल नहीं हैं और न तो कोई सिद्धान्त की बात ही है। पहली श्रेणी के रोग दूसरी श्रेणी में भी बदल जाते हैं। रोग साध्य से असाध्य भी हो जाता है।

जब प्यास कम रहती है और भूख भी बहुत अधिक नहीं लगती और यदि रोगी स्टार्च वाले भोजन बन्द कर देते हैं और प्रोटीन वाले भोजन और थोड़ी मात्रा में वसा जैसे मक्खन आदि खाते हैं तो उनके पेशाब में चीनी की मात्रा कम हो जाती है परन्तु दूसरी श्रेणी के रोगियों की दशा बड़ी शोच-नीय होती है उनको प्रोटीन और वसा वाले भोजन करने से भी लाभ नहीं होता। प्रोटीन और वसा खाने से भी उनके पेशाब में चीनी जाती है। हाँ, यह बात अवश्य होती है कि स्टार्च वाला भोजन बन्द कर देने से चीनी की मात्रा कुछ कम हो जाती है और एक सीमित मात्रा में निकलती है।

जब रोग पुराना पड़ने लगता है और बढ़ने लगता है तब रोग की प्रथम अवस्था खतम हो जाती है और उसकी दूसरी ही अवस्था आ जाती है और फिर प्रोटीन से भी चीनी की मात्रा

कम नहीं होती। हृदय कमजोर हो जाता है और धड़कन बढ़ जाती है तथा पाँव में सूजन आ जाती है, रक्त पतला पड़ जाता है।

इस रोग के लक्षण ये हैं कि रोगी का चमड़ा रूख हो जाता है, मसूड़े पोले पड़ जाते हैं और ढीले हो जाते हैं, वजन बराबर घटता जाता है, प्यास बहुत अधिक लगती है, गला सूखता है क्योंकि चीनी निकल जाने से कफ क्षीण होता जाता है और पित्त या गरमी बढ़ती जती है।

आयुर्वेदीय मत

आयुर्वेद की दृष्टि से देखा जाय तो हम यह कहेंगे कि एलोपैथी में दोषों के घटने बढ़ने का विचार नहीं रखा जाता। इसलिए यह गड़बड़ी रहती है कि असली कारण पर पर्दा पड़ा रहता है।

डाक्टरों ने मधुमेह के जो लक्षण बताये हैं उनमें कफ के भी लक्षण मौजूद हैं और वायु के भी। जब वायु की अधिकता होती है तभी रोगी का शरीर रूखा हो जाता है और रोगी जल्दी-जल्दी अधिक कमजोर होता है और जब कफ की अधिकता होती है तब रोगी अधिक कमजोर नहीं होता। कफज प्रमेह भी पुराना पड़ जाने पर मधुमेह में बदल जाता है क्योंकि वायु अधिक बिगड़ जाता है और तभी रोग असाध्य होता है।

चरक ने भी मधुमेह का कारण कफकारी भोजन को माना है और धातुओं का क्षीण होना भी माना है। यह भी सम्भव है कि पहले कफकारी आहार-विहार के कारण कफ बढ़ कर कफ का प्रमेह उत्पन्न करदे और बाद को धातुओं के क्षीण हो जाने से वायु बढ़ जाय और रोग असाध्य हो जाय।

आयुर्वेद में लिखा है कि अपने कारणों से कुपित होकर जब वायु अपने रूक्ष और कषाय स्वभाव के कारण ओज को

खींच लेता है और मूत्रशाय में ले जाकर पशाब द्वारा निकालने लगता है तब मधुमेह नामक प्रमेह उत्पन्न होता है।

मधुमेह के जहाँ अनेक कारण और धातुओं का क्षय आदि बताया है वहाँ चरक ने कुछ विशेष कारण बताये हैं—लिखा है—भारी, चिकने, खट्टे, और नमकीन पदार्थों के अधिक सेवन से, नवीन अन्न खाने से बहुत जल अथवा मद्य के पीने से, बहुत सोने से, बहुत सुख पूर्वक बैठे रहने से, कसरत न करने से, बे फिकर रहने से, संशोधन कम लेने से, कफ, पित्त मंस और मेद बहुत बढ़ जाते हैं फिर उनसे आवृत होकर वायु ओज धातु को लेकर वस्ति स्थान में आ जाता है और असाध्य मधु मेह उत्पन्न करता है। कितना स्पष्ट वर्णन है। स्टार्ची और चीनी वाले पदार्थ अधिक खाने से जब यकृत उनका उपयोग नहीं कर सकता तब उस ग्लूकोज को जो ओज रूप है वायु वस्ति अर्थात् मूत्रशाय में फेंक देता है। चीजों को एक जगह से दूसरी जगह सरकाने का काम वायु करता है। तभी मधुमेह उत्पन्न होता है। यह चरक का मत आधुनिक एलौपैथी के विचारों से कितना आगे है और इसका निर्णय कई हजार वर्ष पूर्व हो चुका था।

मधुमेह दो तरह के कारणों से होता है। एक तो धातुओं के क्षय होने से और वायु के बढ़ जाने के कारण और दूसरा शरीर के स्रोतों या नसों के बन्द हो जाने से। पेशाब में मधुरता होना और मधु की तरह पेशाब होना ये दोनों ही मधुमेह कहे जाते हैं। क्योंकि दोनों हालतों में पेशाब में मधुरता रहती है इस प्रकार हम देखते हैं कि इक्षुमेह, शीतमेह, आदि कफज प्रमेहों को भी पेशाब में मधुरता के कारण मधुमेह कहा जा सकता है। परन्तु दोषों का निश्चय हो जाने पर चिकित्सा में आसानी हो जाती है। कफज प्रमेह अच्छे हो जाते हैं और

धातुओं के क्षीण होने से वायु के बढ़ने पर जो मधुमेह होता है वह प्रायः नहीं अच्छा होता।

इस रोग में बहुत से रोग उपद्रव स्वरूप भी खड़े हो जाते हैं खास खास रोग ये हैं जो इस रोग में पैदा हो जाते हैं—

एपोप्लेक्सी, (सन्यास या मूर्च्छा) फेफड़े के रोग, राजयक्ष्मा, शोष, स्नायु दौर्बल्य, कारबंकिल आदि। कारबंकिल से अक्सर मृत्यु तक हो जाती है रोगी बहुत दुर्बल हो जाता है। बहुत से लोगों की आँखों में मोतियाबिन्द भी इसी रोग के कारण हो जाता है।

मधुमेह के शिकार

कुछ डाक्टरों का ख्याल है कि यह रोग मुसलमानों की अपेक्षा हिन्दुओं को अधिक होता है क्योंकि हिन्दू लोग ज्यादातर स्टार्ची भोजन ही करते हैं। मुसलमान लोग मांसाहारी होने के कारण प्रोटीन अधिक खाते हैं। स्मरण रखना चाहिए कि अधिक प्रोटीन भी रोग का कारण होता है। उससे कोई अन्य रोग हो जा सकता है। यहूदी लोगों को भी यह रोग अधिक होता है। क्योंकि धनी होने के कारण उनका भोजन भी सदोष होता है।

यह रोग अक्सर अधेड़ उम्र के बाद होता है। बचपन में बहुत कम होता है। हिन्दुस्तान में जवान आदमियों को भी यह रोग बहुत कम होता है। परन्तु यूरोप आदि में अधिक लोगों को होता है। यह तीव्र मधुमेह होता है। पुरुषों की अपेक्षा यह रोग स्त्रियों को कम होता है। परन्तु गर्भावस्था में स्त्रियों को अक्सर मधुमेह हो जाता है।

धनी लोग जो दिमागी काम करते हैं, खाते बहुत अच्छा है, सोच फिकर करते हैं, परन्तु शारीरिक परिश्रम बिलकुल नहीं

करते उन्हीं को यह रोग अथवा प्रमेह का रोग होता है। डाक्टर, वैद्य, वकील, प्रोफेसर, बड़े-बड़े सेठ साहूकार, पंडित, विद्वान आदि जिनको शारीरिक परिश्रम नहीं करना पड़ता परन्तु खूब अच्छा भोजन मिलता है इस रोग के शिकार अधिक होते हैं। इस रोग में पेशाब बहुत अधिक मात्रा में होता है। पेशाब की स्पेसेफिक ग्रेवेटी (आपेक्षिक गुरुत्व) बहुत बढ़ जाता है। शरीर की मांस-पेशियाँ दिन पर दिन कमजोर होती जाती हैं। जितना भी खाता है खाने की तृप्ति नहीं होती। परन्तु जितना ही खाता है उतना ही कमजोर होता जाता है। रोगी को अक्सर अजीर्ण का रोग रहा करता है।

जीभ का रंग अजीब तरह का लाली लिए रहता है। वह सूखी-मोटी और दरदरे दार होती है। रोगी के थूक में शकर की मात्रा नहीं पाई जाती परन्तु मधुमेह वालों के मुँह में अक्सर घाव या छाले रहते हैं और बहुत दुख देते हैं।

मधुमेह के रोगी के सिर में दर्द होता है और शरीर में सुस्ती रहती है। किसी किसी के शरीर में कभी यहाँ कभी वहाँ दर्द होता रहता है।

जब रोग बढ़ जाता है और चरमसीमा पर पहुँचता है तब रोगी की नाड़ी क्षीण हो जाती है और ऐसा प्रतीत होता है कि दम घुट रहा है उसे ताजी हवा की आवश्यकता प्रतीत होती है। ऐसे बढ़े हुए रोगी के मुँह के साँस में एक खास तरह की मीठी-मीठी बू या गन्ध निकलती है और वह ऐसी होती है जैसे पके सेब की गन्ध हो। इस बढ़ी हुई अवस्था में रोगी अक्सर बेहोश हो जाया करता है।

मधुमेह का रोगी मधुमेह से नहीं मरता। ऐसे रोगियों की मृत्यु अक्सर कारबंकिल या क्षय रोग अथवा निमोनिया या

दस्त की बीमारी के कारण होती है इसको यों समझिए कि रोग के उपद्रव में मृत्यु अक्सर होती है।

अन्य रोग

यदि स्त्रियों को यह रोग होता है और बढ़ जाता है तो मासिकधर्म या तो रुक जाता है अथवा कम हो जाता है। पुरुष रोगियों की मैथुन-शक्ति या काम-शक्ति एकदम नष्ट हो जाती है।

प्रमेह में मोतियाबिन्द अक्सर हो सकता है। कभी-कभी लोग एकदम अचानक अंधे हो जाते हैं। गुरदे में सूजन आ जाने से भी आदमी अचानक अन्धा हो जा सकता है।

किसी-किसी रोगी की आँख की स्नायुओं का प्रदाह होता है तथा रेटिना में भी प्रदाह हो जाता है परन्तु ये दोनों रोग बहुत कम लोगों में होत हैं।

इस रोग में कान की झिल्ली अक्सर सूख जाती है जिसके कारण बहरापन हो जाता है तथा टाँगों में दर्द हुआ करता है।

रोगी अक्सर बेहोश हो जाता है। इस बेहोशी में भी अनेक लक्षण होते हैं। श्वास ३० से ४० बार तक आने लगती है और नाड़ी की गति १३० से लेकर १५० तक हो जाती है।

प्रमेह के उपद्रव स्वरूप किसी-किसी रोगी के गैंग्रीन अर्थात पाँव में घाव हो जाता है और नाखून टूटने हैं।

यदि रोग हल्का हो तो रोगी कई वर्ष तक जीवित रहते। जब रोग तीव्र गति से बढ़ता है तब अक्सर क्षय रोग हो जाता है और मृत्यु का कारण हो जाता है हमने ऐसे रोगियों को देखा है जो मधुमेह होने के बाद पचीसों वर्ष तक जीवित रहे और साधारणतया उनका सब काम ठीक ही रहा।

इस रोग में स्नायु सम्बन्धी परिवर्तन प्रायः नहीं पाया

जाता, परन्तु वे कमजोर हो जाती हैं, दिमाग के परदे में अक्सर गिल्टी पाई जाती है अथवा वह पर्दा विकृत हो जाता है।

इस रोग में यकृत में सिरोसिस हो जाता है। कुछ रोगियों में पैनक्रियास सिकुड़ जाता है, और भीतर की तरफ फैटी डिजेनरेशन—वसा के कारण विकृति—पायी जाती है, इसी कारण चीनी का पाचन ठीक ढंग से नहीं हो पाता।

रक्त की परीक्षा करने पर उसमें ग्लाइकोजन (चीनी का अनघुल रूप) पाया जाता है। यह चीज स्वस्थावस्था में भविष्य के लिए जमा रखी जाती है, रोगावस्था में लिवर के खराब होने के कारण रक्त में फेंक दी जाती है।

शकर की मात्रा रक्त में बहुत अधिक पाई जाती है। और रक्त का क्षार भाग बहुत कम हो जाता है। रक्त में क्षार की मात्रा बढ़ाने से ही यह रोग दूर होता है। रक्त में चरबी का अंश बढ़ जाता है। इसकी पहचान यह है कि जब रक्त जमता है तब मलाइ की तरह ऊपर चरबी जमी हुई दिखाई देती है।

पेशाब की दशा

इस रोग में पेशाब की मात्रा बहुत अधिक बढ़ जाती है, प्रतिदिन साढ़े तीन या पौने चार सेर से लेकर ७-८ सेर तक पेशाब होता है। स्पेसिफिक ग्रेविटी या गुरुत्व १०२५ से १०४५ या इससे भी अधिक तक हो जाती है। एक औंस पेशाब में एक ग्रेन से लेकर ४० ग्रेन तक चीनी पाई जाती है। किसी-किसी रोगी में प्रतिदिन २० औंस तक चीनी जाती हुई पाई जाती है। पेशाब में यूरिया और फासफेट दोनों बढ़ जाते हैं यूरिक एसिड की मात्रा नहीं बढ़ती। रोग के बहुत बढ़ जाने पर पेशाब में एलब्यूमिन भी पाया जाता है।

उपद्रव के रूप में एकजीमा हो जाता है। स्त्रियों की योनि

पर अक्सर एक्जीमा हो जाता है और उसमें बहुत खुजली होती है।

अगर रोग हल्का हो तो रोगी को पेशाब की अधिकता और अजीर्ण के सिवा प्रायः और कष्ट नहीं होता और बहुत अधिक दिनों तक मामूली स्वास्थ्य कायम रहता है और रोगी साधारणतया अपनी जिन्दगी चलाता जाता है।

कुछ डाक्टरों का ख्याल है कि मधुमेही की सन्तान को क्षय रोग होने की सम्भावना अधिक रहती है और क्षय रोगी की सन्तान को मधुमेह होने की।

चिकित्सा

पेशाब में चीनी आने का रोग डाक्टरों के लिए और अन्य विधि से चिकित्सा करने वाले सामान्य चिकित्सकों के लिए एक कठिन समस्या है। ये डाक्टर और चिकित्सक रोग के लक्षण को दबाने का प्रयत्न करते हैं उसे जड़ से आराम करने के लिए उनके पास कोई उपाय ही नहीं है। डायबिटीज़ ही नहीं प्रायः सभी छोटे बड़े रोग ऐसे चिकित्सक दबाया करते हैं। जो रोग जड़ से अच्छा नहीं किया जाता, जिस रोग के कारण को दूर नहीं किया जाता है और केवल लक्षणों को दूर करने का प्रयत्न किया जाता है उसी चिकित्सा को शामक चिकित्सा या सप्रेसिव ट्रीटमेंट कहते हैं।

एलोपैथी डाक्टरों ने डायबिटीज़ या मधुमेह को दूर करने के लिए इनसूलीन (Insulin) नामक औषधि का आविष्कार किया है। इस औषधि का इन्जेकशन देकर वे लोग पेशाब में चीनी आना एकदम बन्द कर देते हैं। जिस समय इस उपकारी औषधि का आविष्कार हुआ था इसकी प्रशंसा खूब लम्बी चौड़ी की गई थी परन्तु हम देखते हैं कि आज भी अनेक रोगी

हैं जिनको इनसूलीन चिकित्सा से कोई लाभ नहीं हुआ। और न तो इस चिकित्सा के फलस्वरूप मधुमेह के रोगियों की संख्या ही घट सकी।

सैकड़ों लोगों ने हमको यह लिखा कि इन्जेक्शन लेने के बाद भी उनका रोग नहीं गया। कोई-कोई सज्जन लिखते हैं कि पहली बार जब उनको यह रोग हुआ था तब इन्जेक्शन से आराम हो गया था अथवा दब गया था परन्तु अब उनको इन्जेक्शन से कोई लाभ नहीं होता और निराश होकर उनको और चिकित्सकों के पास जाना पड़ा क्योंकि डाक्टरों के पास इस चिकित्सा के अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं है। क्या ऐसे स्टेटमेंट इस चिकित्सा-विधि के खोखलेपन को नहीं प्रकट करते।

इनसूलिन और कुछ नहीं है जैसा पहले लिखा जा चुका है यह पैनक्रियास (क्लोम ग्रन्थि) का रस है। इसे वैज्ञानिक लोग वैज्ञानिक विधि से पशुओं की पैनक्रियास नामक ग्रन्थि से निकालते हैं और सुइयों द्वारा रक्त में पहुँचा कर चीनी की मात्रा कम करते हैं। यह औषधि मुँह द्वारा भी खिलाई जाती है।

इस प्रकार की चिकित्सा से हाजमें में सुधार नहीं होता; लिवर की क्रिया ठीक नहीं होती, बिगड़ा हुआ पैनक्रियास नामक यन्त्र नहीं सुधरता। इसीलिए इन्जेक्शन का प्रभाव खतम होने पर दूने वेग से रोग बढ़ता है और फिर इनसूलिन के रोके नहीं रुकता और जिन लोगों का अटूट विश्वास इनसूलिन पर होता है उनके हृदय को बड़ा धक्का लगता है और इस औषधि पर से विश्वास उठ जाता है।

प्रमेह मात्र की प्रभावशाली चिकित्सा यही है कि शरीर के भीतरी अंगों में स्थित विष को बाहर कर दिया जाय और ऐसा भोजन ग्रहण किया जाय कि फिर विष इकट्ठा होकर विकार

न पैदा करे। आयुर्वेद के शब्दों में कहें तो कहना चाहिए कि इस रोग में सर्व प्रथम शोधन चिकित्सा करनी चाहिए। परन्तु बहुत से मूर्ख चिकित्सकों के समान संशोधन का अर्थ केवल जुलाब ही न समझना चाहिए। संशोधन होता है उपवास, एनिमा, फलाहार, शाकाहार आदि के द्वारा। धूप-स्नान वायु स्नान-आदि तथा गर्म जल का स्नान रोम कूपों द्वारा शरीर के विष को बाहर करते हैं।

चरक ने लिखा है:—

दृष्ट्वा प्रमेहं मधुरं सपिच्छं मधूपमं स्याद्द्विविधोपचारः।

यदि प्रमेह में पेशाब में मधुरता हो और वह शहद के समान पिच्छिल हो तो उसे मधुमेह कहते हैं। इस रोग की शान्ति के लिए अनेक प्रकार की चिकित्सा करनी पड़ती है।

चरक ने चिकित्सा का संकेत कर दिया है। योग्य चिकित्सक अपने अनुभव ज्ञान और योग्यता के अनुसार इस रोग की चिकित्सा करते हैं। इस रोग के इलाज में यह देखना पड़ता है कि किस दोष की प्रधानता है। मधुमेह में भी कफ की या वात की या पित्त की प्रधानता रहती है। जिस दोष की प्रधानता रहती है उसी दोष के अनुसार इलाज करने से लाभ होता है। अन्धा-धुन्ध इलाज करने वाला चिकित्सक इस रोग के इलाज में सफलता नहीं पा सकता।

किसी-किसी को यह रोग जाड़े में बढ़ जाता है और गरमी में घट जाता है। इसमें समझ लेना चाहिए कि जाड़े में बढ़ने वाला रोग कफ की प्रधानता से है। गरमी में कफ स्वयं शान्त हो जाता है इसीलिए यह रोग भी दब जाता है। यदि किसी को यह रोग गरमी में बढ़े तो पित्त का समझना चाहिए। बरसात में बढ़ने वाला रोग अक्सर वायु की अधिकता वाला

होगा। इसके अलावा अन्य लक्षणों से भी दोष निश्चित कर लेना चाहिए। कफ की प्रधानता मे पेशाब अक्सर सफेद होगा। पित्त की अधिकता में लाल, नीला, काला, पीला आदि कोई रंग रहेगा। कफ की अधिकता में गरमी और प्यास कम मालूम होगी, पित्त की अधिकता में गले और तालू में जलन बहुत होगी, प्यास बहुत लगेगी। वायु की अधिकता से रोगी बहुत कमजोर हो जायगा। शरीर रूखा रहेगा।

कफ की अधिकता वाले मधुमेह में रोगी से खूब कसरत कराइए। तरह-तरह के व्यायाम, दण्ड-बैठक, आसन आदि कराइए, खूब टहलने के लिए कहिए। उपवास कराइए, गरम जल में स्नान कराइए, जलावसेक कीजिए, जल-चिकित्सा कराइए। किंचित उष्ण जल में हिपबाथ कराइए। फलाहार और भोजन सुधार कीजिए। धूप चिकित्सा कीजिए। जौ या सामा अन्न खिलाइए। यदि पित्त की अधिकता हो तो ठंडे पानी से स्नान कराइए। हिपबाथ कराइए, सिट्स बाथ कराइए। गरम चीजों से परहेज कराइए। धूप से बचिए। मठे का प्रयोग कीजिए। मीठे फल जैसे अंगूर, किशमिश, अंजीर आदि का कल्प कीजिए। वात की प्रधतता में वातनाशक प्रयोग कीजिए। चरक के उक्त संकेत की व्याख्या इसी तरह और वृहद रूप से भी की जा सकती है।

कब्ज दूर करने के लिए विशेष रूप से प्रयत्न करना चाहिए इसके लिए एनिमा तो लेना ही चाहिए कभी-कभी हलकी दस्तावर दवा भी खाते रहना चाहिए। इसके लिए हरड़ सब से अच्छी चीज है। रात को त्रिफला शहद से चाटना चाहिए अथवा ४-५ हर्रे खा लेना चाहिए। हर्रे से दस्त भी साफ आता है और यह प्रमेह मात्र की औषधि भी है।

शरीर मे तेल की मालिश, सूखी मालिश, सूर्य किरण

चिकित्सा से चमड़े की क्रिया तेज होने लगती है। इसलिए इनका प्रयोग खूब अच्छी तरह करना चाहिए। गरम जल से खूब अच्छी तरह स्नान करना चाहिए प्रातःकाल टहलना चाहिए। रक्त की अम्लता दूर करने के लिए फल और तरकारियों का खूब इस्तेमाल करना चाहिए।

डाक्टर लोग अम्लता दूर करने के लिए सोडा बाई कार्ब खिलाया करते हैं परन्तु इसका प्रभाव स्थाई नहीं पड़ता। कुछ डाक्टरों की राय है कि पेशाब में चीनी की मात्रा कम करने के लिए चौथाई चावल की मात्रा में अफीम दिन में तीन बार खिलाना चाहिए। परन्तु यह याद रखना चाहिए कि अफीम खाने से कब्ज बढ़ जाता है। कब्ज दूर करने के लिए सदैव प्रयत्न करना चाहिए। यह हम पहले ही लिख चुके हैं कि डाक्टर लोग इनसूलिन का इन्जेक्शन इस रोग में करते हैं और उसी पर बहुत अधिक विश्वास करते हैं। इनसूलीन से अधिक लाभ जामुन की गुठली का चूर्ण १५ रत्ती की मात्रा में दिन में तीन बार इस्तेमाल करने से होता है।

प्राकृतिक-चिकित्सा

मधुमेह अथवा पेशाब में चीनी जाने के रोग में सदैव अच्छी चिकित्सा करने की आवश्यकता है। साधारण ज्ञान और अनुभव वाले चिकित्सक उतना अच्छा काम नहीं कर पाते फिर भी हम यहाँ पर अनुभूत चिकित्सा क्रम लिख रहे हैं जिसका सहारा लेने से रोग से मुक्ति मिल जाती है। प्राकृतिक-चिकित्सा के सिद्धान्त के सम्बन्ध में हम ऊपर आयुर्वेदीय मत प्रकट कर चुके हैं। उसी को विस्तार के साथ यहाँ हम व्यक्त कर रहे हैं—

रोग की अवस्था के अनुसार इस रोग में ४ दिन से लेकर २०

दिनों तक का उपवास करने की आवश्यकता पड़ती है। उपवास में केवल सन्तरे का रस दिया जाता है। पाव भर रस एक बार में देना चाहिए और इस तरह तीन बार पाव-पाव भर रस प्रतिदिन देना चाहिए। स्टार्च और प्रोटीन वाले भोजन एक दम बन्द कर देने की आवश्यकता पड़ती है। २-२ घंटे पर एक-एक गिलास या जितनी इच्छा हो उसके अनुसार कुछ कम भी गरम पानी पीना चाहिए। उपवास के दिनों में शाम को गरम जल का एनिमा प्रतिदिन लेना चाहिए। हलके गरम जल से हिपबाथ या सर्वांग स्नान करना चाहिए। प्रायः ५-७ या १० दिनों में पेशाब में चीनी आना बन्द हो जाता है। यदि चीनी १० दिनों के उपवास और ऊपर बताये नियमों के पालन से न बन्द हो, कुछ कसर रह जाय तो २-४ दिनों तक और उपवास करना चाहिए और ऊपर के नियमों का पालन करना चाहिए। जब चीनी एकदम बन्द हो जाय तब फलों का भोजन आरम्भ करना चाहिए। यदि पेशाब में चींटें न लगें तो समझिए पेशाब में चीनी नहीं है। आप चाहें तो किसी डाक्टर से पेशाब की जाँच करा लीजिए।

फलाहार के समय सूखे मेवे जैसे मुनक्के, किशमिश, छुहारे, बादाम, नारियल, खूबानी आदि बन्द कर देना चाहिए। मौसमी फल जैसे अमरूद, नासपाती, सेब, नाख, पकी गूलर, सन्तरे, मोसम्बी ही लेना चाहिए। यथा सम्भव केला आदि स्टार्च वाले फल बन्द रखना चाहिए। शाम को प्रतिदिन आध सेर दूध लिया जा सकता है। एनिमा गरम पानी से प्रतिदिन लेना चाहिए हिपबाथ प्रतिदिन लेना चाहिए। शक्ति के अनुसार टहलना चाहिए। गहरी साँस लेना चाहिए। प्रतिदिन १०-५ मिनट वायु स्नान करना चाहिए। सप्ताह में ३ दिन घर्षण स्नान करना चाहिए। सप्ताह में दो दिन १५ मिनट से लेकर आध घंटे तक धूप स्नान करना

चाहिए। सप्ताह में एक दिन गरम जल में सेंधा नमक मिला कर उससे स्नान करना चाहिए। १०-१५ दिन फलों पर रहने के बाद रोटी सब्जी पर धीरे-धीरे आना चाहिए और एक समय जौ की रोटी और सब्जी का भोजन करना चाहिए और दूसरे समय दूध और फल का भोजन करना चाहिए।

यदि कब्ज रहे तो एनिमा ले लेना चाहिए परन्तु बाथ आदि और उपयोगी नियमों का पालन प्रति-दिन करना चाहिए। तरकारियों में परवल, करेला, आदि सबसे अच्छे होते हैं। यदि पेशाब में चीनी बन्द हो गई तो भिन्डी, लौकी, नेनुआ फूल-गोभी आदि ली जा सकती हैं। टमाटर फल के रूप में कच्चा भी खाया जा सकता है और तरकारी भी बना कर खा सकते हैं। तरकारी सादी उबली हुई ही खानी चाहिए। उसमें किसी तरह का मसाला नहीं डालना चाहिए। हाँ, यदि इच्छा हो तो हल्दी, धनिया, जीरा, नमक आदि थोड़ी मात्रा में डाल सकते हैं। यह क्रम १५ दिन या एक महीना चलाना पड़ता है इतने से ही रोग से छुटकारा मिल जाता है।

यदि आवश्यकता हो और रोग कुछ शेष रह गया हो तो उपवास से लेकर फलाहार और रोटी वाले आहार तक पूरा क्रम एक बार और दोहरा देना चाहिए। और फिर सदैव ऐसा आहार रखना चाहिए जिसमें फिर रोग पैदा न हो जाय। ऐसे भोजन के सम्बन्ध में यह याद रखना चाहिए कि जौ या गेहूँ की रोटी खाई जाय। उसमें थोड़ा चना अवश्य मिलाया जाय। चावल प्रायः बन्द कर दिया जाय अथवा महीने में २-३ दिन अच्छा चावल खाया जाय। एक ही समय रोटी सब्जी खाई जाय और दूसरे समय ताजे मौसमी फल और दूध पर रहा जाय। दिन भर में दो बार से अधिक न भोजन किया जाय। चटपटे मसाला आदि बिलकुल बन्द किया जाय।

कब्ज रहे तो तुरन्त एनिमा लेकर पेट साफ किया जाय। अथवा एनिमा प्रति सप्ताह लिया जाय। आलू न खाया जाय। यदि आलू खाने की इच्छा हो तो जितना आलू आप खायँ उतनी रोटी कम कर दें। गेहूँ का बिना छना आटा काम में लाना चाहिए। आटे में यदि आध पाव चोकर प्रति सेर के हिसाब से और मिला लिया जाय तो आटा और गुणकारी हो जाता है। परिश्रम पूवक जीवन व्यतीत किया जाय और प्रतिदिन पैदल चला जाय और खूब स्नान किया जाय।

उपवास के बाद हमने फलाहार का क्रम ऊपर बताया है। फलाहार के बदले में दूध कल्प करने से भी चीनी बन्द हो जाती है और शरीर पुष्ट हो जाता है। दूध के बदले में मठे का कल्प भी चलता है। शेष क्रम वैसे ही चलते हैं जैसे ऊपर बताये गये हैं। दूध-कल्प के सम्बन्ध में बहुत कुछ हमने अपनी पुस्तक दूध चिकित्सा में लिखा है उसे वहीं देखिए।

मधुमेह में या पेशाब में चीनी जाने के रोग में पथ्य पालन की बहुत आवश्यकता पड़ती है। इस रोग में शारीरिक और मानसिक पूर्ण विश्राम की आवश्यकता पड़ती है। रोगी के लए रोगावस्था में और रोग मुक्ति के बाद भी टहलने से बढ़ कर कोई व्यायाम नहीं है परन्तु टहलने में ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि यदि शक्ति हो तो ४-५ मील या ६-७ मील तक टहला जाय। मील आधे मील के टहलने से लाभ नहीं होता। धूप स्नान, धर्षण स्नान, हिप-बाथ, गहरी साँस, वायु स्नान आदि जीवनी शक्ति बढ़ाने और रोग को निर्मूल करने के लिए अमोघ साधन हैं इनको तो कभी भी नहीं बन्द करना चाहिए।

मानसिक चिन्ता, धन कमाने की फिकर या और किसी तरह का परिश्रम एक दम बन्द कर देना चाहिए। सदैव प्रसन्न

रहना चाहिए और रोग के सम्बन्ध में सोच-सोच कर घुलना नहीं चाहिए।

मधुमेह-चिकित्सा की एक और विधि

मधुमेह में एक सप्ताह तक पतले रस वाले फलों पर रहिए। इसके लिए सन्तरा, अंगूर, आम, जामुन, अनार आदि कोई भी फल चुन सकते हैं।

एक सप्ताह बाद प्रातःकाल फलों के रस का नाश्ता और दोपहर को एक वक्त चोकरदार आटे की रोटी लीजिए। परन्तु रोटी धीरे-धीरे बढ़ाकर पूरे भोजन पर आइए। अथवा गेहूँ या जव की दलिया और उबली तरकारी खाइए और शाम को फलों का रस लीजिए। दिन में दो बजे १ गिलास मक्खन निकाला मठा लीजिए। रात को कुछ मत खाइए। भोजन का यह क्रम एक मास तक चलाइए और नीचे लिखी चिकित्सा कीजिए।

प्रातःकाल आधे घन्टे तक मिट्टी की पट्टी रखिए। और ताजे पानी से एनिमा लीजिए। इसके बाद ७ मिनट से आरम्भ करके एक मिनट प्रतिदिन बढ़ाते हुए आधे घन्टे तक हिपबाथ। १५ मिनट का सिट्सबाथ। हिपबाथ के लिए यदि रोगी अधिक कमजोर न हो तो ठंडा पानी लेना चाहिए अन्यथा थोड़ा गरम। इसके बाद टहलें और हलासन और मयूरासन करें।

शाम को २० मिनट तक मिट्टी की पट्टी और हिपबाथ। आवश्यकता हो तो मिट्टी की पट्टी के बाद एनिमा ले सकते हैं।

हाजमा बढ़ाने के लिए शुरू में १५ दिनों तक पीली बोतल का धूप में पकाया जल हर घन्टे १ औंस की खुराक में आठ बार लेना चाहिए। १५ दिन बाद नीली बोतल का जल प्रति घन्टे १ औंस की मात्रा में लेना चाहिए। पेड़ू पर नीले शीशे का प्रकाश धूप में १५ मिनट और रात में दीपक से १ घन्टे तक

लेना चाहिए। इस चिकित्सा क्रम से प्रायः १५ दिनों में पेशाब में चीनी आना बन्द हो जाता है।

मधुमेह और उपवास

उपवास इस रोग को दूर करने के लिए अमोघ शस्त्र है। उपवास से प्रायः तीन-चार दिनों में ही चीनी की मात्रा घट जाती है। इसके बाद फलाहार करने और भोजन सुधार से स्थाई रूप से यह रोग चला जाता है। जब भोजन ग्रहण किया जाय तब भी उपवास के महत्त्व को ध्यान में रखना चाहिए और सदैव कुछ कम ही भोजन करना चाहिए जिसमें पाचन में कोई गड़बड़ी न हो।

घी और चिकनाई वाले फल जैसे अखरोट, काजू, बादाम, आदि मधुमेह में बहुत हानिकर होते हैं। क्योंकि चिकनाई घी-तेल आदि पचाना बलवान पाचन शक्ति का काम है। मधुमेह पाचन शक्ति की खराबी से ही होता है ऐसा कोई भी भोजन जो हाजमें को खराब करने वाला हो मधुमेह में अपथ्य होता है। हमारी राय में घी और चिकनाई वाली चीजें तथा अण्डा आदि एकदम बन्द कर देना चाहिए।

इस रोग में उपवास चिकित्सा ही अधिक कारगर होती है। डाक्टर एलेन (Allen) ने भी इस रोग में उपवास को ही उपयोगी बताया है। उपवास चिकित्सा तो प्राकृतिक चिकित्सा का खास अंग है। उपवास के बाद तरकारियों का आहार उसके बाद फलों का आहार फिर अन्न में दूध और फल लेना सर्वोत्तम इलाज है।

जब रोटी पर आया जाय तब चोकर की रोटी खाई जाय और दूध में भिगोकर चना शहद से खाया जाय। रोटी खूब सिकी हुई होनी चाहिए। अथवा आधा जव और आधा चना

की रोटी बना कर खाई जाय और शाक तरकारियों की मात्रा रोटी से चौगुनी रखी जाय। रोग आराम होने पर भी वे ही शाक तरकारियाँ खाई जायँ जो पथ्य होती हैं। अपथ्य चीजें न खाई जायँ तो रोग दुबारा न होगा।

मधुमेह में भोजन

कोई भी रोग हो उस पर भोजन का बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। भोजन उस रोग को जड़ से आराम भी कर सकता और उसे ऐसी अवस्था में भी पहुँचा सकता है कि रोग स्थायी हो जाय कभी आराम ही न हो। चिकित्सा-विज्ञान का यह खुला रहस्य है। इस रहस्य को यथातथ्य केवल आयुर्वेद ने ही समझा है। एलोपैथ इस विज्ञान से बहुत ही अनभिज्ञ हैं। इसी कारण वे दवाइयों पर ही विश्वास करते हैं, अन्धा धुन्ध दवाइयाँ और एन्जेक्शन चलाए जाते हैं, खाने पीने की ओर उनका ध्यान नहीं जाता। डाक्टरों की देखा-देखी वैद्य लोग भी अपनी प्राचीन परिपाटी का त्याग करते जा रहे हैं और रसों पर ही अधिक विश्वास करने लगे हैं। गलती गलती ही है चाहे वैद्य करें या डाक्टर। कोई भी विवेक-शील आदमी गलतियों की आलोचना किये बिना नहीं रह सकता।

हम यह बता चुके हैं कि जब रक्त में क्षार और अम्ल का अनुपात ठीक रहता है अर्थात् रक्त में ८० प्रतिशत क्षारता और २० प्रतिशत अम्लता रहती है तब हमारा स्वास्थ्य ठीक रहता है और जब अम्लता का अनुपात बढ़ जाता है तभी हम रोगी हो जाते हैं। इसीलिए स्वस्थावस्था में भोजन में ८० प्रतिशत क्षार उत्पन्न करने वाले पदार्थ रखे जाते हैं और २० प्रतिशत अम्लोत्पादक पदार्थ रखे जाते हैं। दूसरे शब्दों में यों समझिए कि कुल भोजन का ४/५ भाग ऐसे पदार्थ रखे जाते हैं जो क्षार

उत्पन्न करते हैं और १/५ अम्ल उत्पन्न करने वाले। फल वाली तार्जा भाजियाँ, पालक, बथुआ, मरसा, चौराई आदि शाक और फल जैसे अमरूद, रस भरी, टमाटर, जामुन, खीरा, ककड़ी, नाशपाती, सेब, पपीता, सन्तरे आदि तथा धारोष्ण दूध क्षार उत्पन्न करते हैं, बासी भोजन, उबाला हुआ दूध, अण्डा, चावल, गेहूँ, मकई, बजड़ा और सभी तरह की दालें रक्त में अम्लता उत्पन्न करती हैं।

जब रोग शरीर में घर कर जाता है तब रक्त की अम्लता घटाने के लिए जिसमें रक्त की क्षारता ठीक अनुपान में आ जाय कुछ दिनों तक क्षारमय ही भोजन करने की व्यवस्था दी जाती है अर्थात लौकी, परवल, भिंडी, नेनुआ, गोभी, टमाटर, आदि तरकारियाँ और अमरूद, जामुन, फालसा, खिरनी, सेब, सन्तरे, पपीते आदि फल तथा धारोष्ण दूध और मठा आदि ही खाने की व्यवस्था दी जाती है। महीने दो महीने में जब रोग निर्मूल हो जाता है तब फिर धीरे-धीरे स्वस्थावस्था का भोजन दिया जाता है। फल और तरकारियों तथा दूध और मठा की व्यवस्था करते समय रोग और रोगी का विचार करना पड़ता है, देश, काल, बल, समय, व्याधि अवस्था आदि का विचार करके व्यवस्था दी जाती है।

मधुमेह का रोग एक खास ढंग का रोग है इसलिए इसमें भोजन व्यवस्था भी खास ढंग की दी जाती है। यह बात पहले ही बताई जा चुकी है कि जब खाया हुआ स्टार्च नहीं पचता और रक्त में नहीं मिल पाता तब वह गुर्दे द्वारा पेशाब के साथ बाहर कर दिया जाता है। इसी को मधुमेह कहते हैं। इसको सीधे सादे शब्दों में कहना चाहें तो यों कहना पड़ेगा कि मधुमेह खराब हाजमें से उत्पन्न हुआ रोग है। अतः मधुमेह में ऐसा भोजन देने की आवश्यकता रहती है जिसमें स्टार्च बहुत ही कम मात्रा में हो और साथ ही वह भोजन ऐसा हो जो जल्दी पच जाय।

डाक्टर लोग यह समझते हैं कि स्टार्च का ठीक-ठीक पाचन न होने से ही मधुमेह होता है अथवा पेशाब में चीनी आने लगती है। परन्तु भोजन विज्ञान या आहार शास्त्र का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण वे अपने रोगियों को स्टार्च के बदले प्रोटीन या मांस बनाने वाली चीजें खिलाने लगते हैं। प्रोटीन देने से और स्टार्च कम कर देने से आरम्भ में ऐसा मालूम होने लगता है कि पेशाब में चीनी कम आ रही है या बिलकुल बन्द हो गई है। परन्तु असली रोग का ठीक-ठीक इलाज न होने के कारण रोग तो ज्यों का त्यों बना रहता है कुछ दिनों बाद रोग पहले से अधिक उग्र रूप में प्रगट होता है। इसलिए हमारी राय मधुमेह में प्रोटीन की मात्रा बढ़ाना अच्छा नहीं है। प्रोटीन बढ़ाने से रोग इसलिए अच्छा नहीं होता कि प्रोटीन अम्ल वर्द्धक होता है। इसके अधिक खाने से रक्त की अम्लता बढ़ती । जब तक रक्त में क्षार का अनुपात बढ़ कर ठीक नहीं हो जाता तब तक कोई भी रोग हो दूर नहीं हो सकता।

शाक-भाजियों में भी स्टाच होता है किन्तु उनमें बहुत ही कम होता है। फलों में २० प्रतिशत तक स्टार्च होता है। इस लए ऐसे फल जिनमें स्टार्च अधिक हो नहीं खाना चाहिए। किन्तु ऐसी शाक-तरकारियाँ जिनमें ५ प्रतिशत या १० प्रतिशत स्टार्च होता है खाने की राय दे दी जाती है। हमारा आयुर्वेद तो ऐसे ही भोजन की सलाह देता है जिनमें स्टार्च बहुत ही कम हो जैसे परवल या करैला। परवल, करैला और गूलर आयुर्वेद के मत से मधुमेह में उत्तम भोजन हैं।

आयुर्वेद के मत से भोजन की व्यवस्था देते समय रसों का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। जैसे तीते और कसैले रस वाले फल और शाक-तरकारियाँ मधुमेह में पथ्य समझी जाती हैं। उदाहरण द्वारा यदि समझाना चाहें तो हम कह सकते हैं

कि भिंडी में स्टार्च १० प्रतिशत से अधिक नहीं है परन्तु इसका रस मधुर है और यह आयुर्वेद के मत से कम स्टार्च रखते हुए भी मधुमेह में उतना अच्छा भोजन नहीं है जितना अच्छा जामुन है। पकी जामुन में १६·७ प्रतिशत स्टार्च होता है परन्तु जामुन का रस कसैला है मधुर नहीं। अपने कसैलेपन के कारण ही जामुन पथ्य समझी जाती है।

नीचे हम ऐसे फल और शाक-तरकारियों की नामावली दे रहे है जिनमें स्टार्च की मात्रा २० प्रतिशत से कम है इस सारिणी से पाठक आसानी से जान लेंगे कि कौन सी शाक-तरकारियाँ उन्हें लेनी चाहिए।

५ प्रतिशत या कम स्टार्च वाले फल

तरबूजा, ताड, टमाटर पका।

६ से १० प्रतिशत स्टार्च वाले फल

अंगूर, बिलायती चकोतरा, बेदाना, अमरूद पहाड़ी, लुकाट, नारंगी, पपीता, आड़ू, अलूचा, चकोतरा, स्ट्राबेरी।

११ से २० प्रतिशत स्टार्च वाले फल

सेब, मकोय, अंजीर, अमरूद, जामुन (१६·७) मीठा नीबू, पका आम, आम अकोला, नासपाती देशी, नासपाती बिलायती, अनन्नास, पहाड़ी केला, (१८·०) अनार, बिही, कैथा।

५ प्रतिशत या कम स्टार्च वाले शाक

बथुआ, चौराई का डंठल, पेठा, करेला, घिया कद्दू, गोभी पालक, सलाद, सहिजन, कद्दू, तरोई, चिचिंडा, मूली, पालक का डंठल, टमाटर, सफेद कद्दू।

६ प्रतिशत से १० प्रतिशत स्टार्च वाले शाक

लाल चौराई, पात गोभी, गाजर का पत्ता धनिया का पत्ता,

जवाइन का पत्ता, मेथी का साग, पुदीना, अगस्त, मकोय, गाजर, छोटा करैला, बैगन, सेम, गुआर की फली, भिण्डी, प्याज का साग, सलजम। (हमारी राय में सेम भिण्डी और गुआर की फली कभी-कभी और कम मात्रा में खानी चाहिए।)

११ से २० प्रतिशत स्टार्च वाले शाक

सहिजन, प्याज बड़ी, प्याज छोटी, जमीकन्द, करम कल्ला, प्याज, गाँठ गोभी, पात गोभी आदि इस रोग में अच्छा पथ्य है।

डाक्टर लोग कहते हैं कि बकरे का मांस, अण्डे, पनीर, मुर्गी का मांस और मछली रोगी को दी जा सकती है क्योंकि इनमें स्टार्च नहीं होता। ये प्रोटीन वाली चीजें हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के नियम के अनुसार यह गलत भोजन है और इलाज का गलत ढँग है।

अपथ्य

आलू, चावल, टैपिओका, मटर, गाजर, अरारोट, सबूदाना, सब तरह के मीठे फल जैसे खजूर, मुनक्के, अंजीर, किशमिश, खूबानी शलजम, घी, तेल आदि अपथ्य हैं।

खाने पीने की चीजें अक्सर बन्द कर देने पर रोगी बड़ी कठिनाई में पड़ जाता है क्योंकि जो चीजें उसे खाने को बताई जाती हैं वे वे स्वाद और बदमजा होती हैं। दूसरे खर्च भी बहुत बढ़ जाता है। इसलिए साधारण आमदनी के रोगी कठिनाई में पड़ जाते हैं।

सोयाबीन प्रोटीन प्रधान होता है इसलिए डाक्टर लोग इसे खाने की राय देते हैं परन्तु यह भी गलत भोजन है।

अधिक चीनी वाले पदार्थ जैसे मुनक्के, किशमिश, अंजीर आदि से मधुमेह में उपकार नहीं हो सकता क्योंकि ये चीजें

पेशाब में चीनी की मात्रा को और भी बढ़ाती है। अंगूर का कल्प आश्चर्यजनक लाभ करता है क्योंकि उसमें मुनक्के की अपेक्षा कहीं कम चीनी होती है। पानी का अंश ही उसमें अधिक होता है।

दूध के कल्प से मधुमेह में आश्चर्यजनक लाभ होता है। दूध की कल्प की विधि हमारी पुस्तक दूध चिकित्सा में खूब समझा कर लिखी गई है। मठा भी इस रोग में अच्छा लाभ-दायक होता है। मठे में जो खटास होती है वह रक्त की अम्लता बढ़ाने वाली नहीं होती। उसमें दुग्धाम्ल या लैक्टिक एसिड होता है। यह खटाई पाचन- शक्ति बढ़ाती है पाचन-शक्ति बढ़ने से इस रोग में स्थाई रूप से लाभ होता है। क्योंकि यह रोग ही पाचन-शक्ति की कमजोरी से होता है। जब पैनक्रियास ग्रन्थि का रस समुचित रूप से निकलता है और यह अंग पूर्ण स्वस्थ रहता है और अपना कार्य ठीक-ठीक करता रहता है तब स्टार्च पच जाता है। स्टार्च के पचने में यकृत भी सहायक होता है। मठा इन दोनों यन्त्रों को पूर्ण स्वस्थ रखता है, आँतों को चैतन्य बनाता है इस कारण पाचक रस कुछ दिनों में सबल हो जाता है और पूर्ण रूप से बनने लगता है तथा स्टार्च का पाचन ठीक तरह से होने लगता है।

औषधियाँ

मधुमेह-चिकित्सा के सम्बन्ध में पहले जो कुछ लिखा जा चुका है उसका पालन करने से प्रायः बिना किसी औषधि के ही रोग दूर हो जाता है। ऐसा बहुत कम हो सकता है कि रोग न जाय। यदि उन्हीं उपायों का अवलम्बन लेते हुए कुछ आयुर्वेदीय औषधियों का सेवन किया जाय तो रोग की शान्ति शीघ्र होती है। प्रमेह की चिकित्सा लिखते समय हमने बहुत सी

आयुर्वेदीय औषधियों के नुस्खे लिखे हैं उन नुस्खों से काम लिया जा सकता है।

नीचे हम कुछ विशेष गुणकारी औषधियाँ लिख रहे हैं उनका प्रयोग यथोचित समय पर युक्तिपूर्वक करने से बड़ा उपकार होता है।

(१) बसन्त कुसुमाकर रस; आँवले के रस और शहद के साथ अथवा बेल की पत्ती का रस और शहद के साथ खाने से लाभदायक होता है।

(२) चन्द्रप्रभा बटी; हल्दी का चूर्ण, आँवले का रस और शहद के साथ खाने से पेशाब में चीनी जाना बन्द हो जाता है।

(३) गुड़मार नामक जड़ी ३ माशे की मात्रा में खाने से पेशाब में शकर जाना बन्द हो जाता है।

(४) बेल के पत्ते का रस १ तोला, ६ माशे शहद के साथ चाटने से लाभ होता है।

(५) ६ माशे जामुन की गुठली का चूर्ण शहद के साथ चाटने से पेशाब में चीनी जाना बन्द हो जाता है।

(६) न्यग्रोधादि चूर्ण मधुमेह की उत्तम औषधि है।

(७) ३ माशे जामुन की गुठली, ३ माशे गुड़मार की पत्ती दोनों का चूर्ण बना कर खाने से पेशाब में चीनी जाना बन्द हो जाता है।

(८) मोती की सीप की भस्म ३ रत्ती, गुड़मार का चूर्ण ३ माशे, जामुन की गुठली का चूर्ण, ३ माशे इकट्ठा करके बेल की पत्ती के रस के साथ चाटने से पेशाब में चीनी जाना रुकता है।

(९) ६ रत्ती शिलाजीत शहद के साथ चाटने से मधुमेह में लाभ होता है।

(१०) वंग भस्म १ रत्ती, शिलाजीत ३ रत्ती, स्वर्णमाक्षिक भस्म १ रत्ती, मोती की सीप की भस्म २ रत्ती, जामुन की गुठली का चूर्ण ३ माशे इन सब को शहद के साथ चाटने से लाभ होता है।

(११) सफेद पपरिया कत्था ६ माशे, और ६ माशे सुपाड़ी का काढ़ा बनाकर पीने से मधुमेह में लाभ होता है। जितनी भी तीती और कसैले रस वाली चीजें हैं ये सभी चीनी की मात्रा कम करने वाली होती हैं।

नीचे लिखा चिकित्सा क्रम अच्छा लाभदायक है—

प्रातःकाल वसन्त कुसुमाकर बेल की पत्ती का रस और शहद के साथ।

१० बजे दिन में जामुन की गुठली का चूर्ण ३ माशे, गुड़मार का चूर्ण ३ माशे, मोती के सीप की भस्म २ रत्ती, बेल की पत्ती के रस के साथ या आँवले के रस के साथ।

२ बजे दिन में चन्द्रप्रभा बटी शहद के साथ।

६ बजे शाम को शिलाजीत ३ रत्ती, वंग भस्म १ रत्ती, स्वर्ण-माक्षिक भस्म १ रत्ती, जामुन की गुठली ३ माशे शहद के साथ।

जीवन सखा, प्रेस, प्रयाग में मुद्रित।



रूपलाल जी वैश्य

श्रीधन्वन्तरयेनमः



जिसमें

दशमूल क्या ? दशमूल की परिभाषा, दशमूल के गुण, व्यवहार करने की विधि, पंचमूल बृहत् पंचमूल के गुण तथा अनेक प्रयोग शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, बृहती, कटेरी, गोखरू, वेल, अग्नि मंथ श्योनाक, खम्भारी, पाटला आदि दस औषधियों का विस्तार पूर्वक सचित्र वर्णन है।

लेखक—
बाबू रूपलाल जी वैद्य
बनारस

सम्पादक—
वैद्य बांकेलाल गुप्त
सम्पादक धन्वन्तरि

प्रकाशक

मैनेजर—श्रीधन्वन्तरि कार्यालय

विजयगढ़ ज़िला अलीगढ़।

द्वितीयवार २००० प्रति | सन् १९२८ | मूल्य ॥)

प्रकाशक—

वैद्य बांकेलाल गुप्त
सम्पादक धन्वन्तरि
विजयगढ़।

मुद्रक—

शङ्करलाल शर्मा,
भारत प्रिंटिङ्ग प्रेस,
अलीगढ़।

भूमिका



प्राचीन आचार्यों ने हमारी सुविधा के लिये अनेक ग्रंथ कोष निघन्टु निर्माण किये हैं पर उनमें बनौषधियों का सांगोपाङ्ग सचित्र वर्णन नहीं मिलता और न पूर्व समय के से ऋषिकुल ही रहे जहां प्रत्यक्ष ज्ञान कराया जाता था इसमें अनेक बनौषधियां नकली व्यवहार में आरही हैं। इसी प्रकार दशमूल की दशा थी कोई वैद्य कुछ और कोई वैद्य कुछ व्यवहार करता था। यह अभाव मेरे हृदय में खटकता था अतः मैंने युक्तप्रान्तीय वैद्य सम्मेलन के उत्सव पर यह सूचना दी थी कि जो "दशमूल" पर सर्वोत्तम निवन्ध लिखेगा उसे एक पदक प्रदान किया जायगा। उस सूचना से मंत्री महोदय के नाम अधिक निवन्ध आये थे उन सब में रूपलाल जी वैश्य हेडक्लार्क डिस्ट्रिक्ट लोको सुपरिंटेंडेंट आफिस बी० ए० डवल्यू रेलवे बनारस का निवन्ध सर्वोत्तम था। और उन्हें ही वह "पदक" भी प्रदान किया गया था। हमने उस निवंध को प्राप्त कर पाठकों और आयुर्वेद के हित के लिये प्रकाशित किया है आशा है कि वैद्य लोग इससे लाभ उठा लेखक के श्रम को सफल करेंगे।

वैद्य बांकेलाल गुप्त

श्रीधन्वन्तरयेनमः



आयुर्वेद शास्त्र में दशमूल एक प्रसिद्ध वनस्पति समूह गिना जाता है। और इसके गुण भी शास्त्रों में विस्तार से वर्णित हैं तथा अनेक प्रयोगों में इसको डालने का विधान है तथा इस के द्वारा अनेक स्वतन्त्र प्रयोग भी बनते हैं जिनका फल चमित्कारिक होता है। भारतवर्ष का एक छोटा सा भी वैद्य इसके बहुमूल्य गुणों से अनभिज्ञ नहीं है। इसके गुण के प्रभाव वैद्यों में ही नहीं सर्व साधारण में भी प्रसिद्ध हैं। यह इतना लाभप्रद और प्रसिद्ध होने से ही भारत के प्रायः सबही प्रदेशों में बिकता और व्यवहृत होता है। किंतु खेद के साथ लिखना पड़ता है कि कहीं पर छाल व्यवहार होती है तो कहीं फलही डाला जाता है। यहीं क्यों, मोथा, गिलोय, प्रभृति औषधियां भी मिश्रित देखी गई हैं। पाटला के स्थान में पाठा और श्योनाक के स्थान में अरलू तो अनेक समझदार वैद्य डालते देखे गये हैं। बात यह है कि जिस को जो सुलभता से मिलगया उस ने

उसका ही व्यवहार कर लिया है। कोई पूछने वाला नहीं, तथा कोई प्रमाण नहीं देखता, परिभाषा की तरफ ध्यान नहीं देता, दशमूल का अर्थ नहीं लगाता तब जो दशमूल में देखा जाय वही थोड़ा है।

विचारिये कि जब वनस्पतियां ही उत्तम न होंगी तब उसका तथा उसके द्वारा बनाये हुए प्रयोग का क्या गुण (लाभ) होगा? सिद्ध औषधियों का आधार वनस्पतियों पर है पर वर्तमान में वनस्पतियों की तरफ वैद्य ध्यान ही नहीं देते हैं। *

दशमूल क्या है?— "दशानां मूलानां समाहारः दशमूलम्" अर्थात् दश वनस्पतियों की जड़ के समूह को दशमूल कहते हैं+। उन दश वनस्पतियों के नाम आयुर्वेद शास्त्र में यह लिखे हैं:— शालपर्णी. पृष्टपर्णी, कटेरी दोनों, गोखरू वेल अग्निमंथ, श्योनाक, खम्भारी, पाटला, यथा:—

---

*धन्वन्तरि—औषधालय बिजयगढ़ ने वनस्पति विभाग प्रथक खोल दिया है तथा उस में भारत के अनेक प्रांतों से वनस्पति मंगाकर संग्रह की गई हैं। सूची भी प्रथक छापी गई है।

व्यवस्थापक

लघु पंचमूल–शालपर्णी, पृष्टपर्णी, कटेरी दोनों, गोखुरू। वृहत् पंचमूल– वेल, अरनी, श्योनाक, खम्भारी, पाटला। इन दोनों को मिलाकर दशमूल कहते हैं।

—लेखक

शालपर्णी पृष्टपर्णी वृहताद्वय गोक्षुर:।
बिल्वाग्निमन्थ श्योनाक काश्मरी पाटलायुतैः
दशमूल मिति ख्यात: क्वाथित तज्जलं पिवेत्
—शार्ङ्गधर संहिता।

परिभाषा—दशमूल की कई एक वनस्पतियों की जड़ बहुत ही सूक्ष्म होती है, तथा कई एक वनस्पतियों की मूल अधिक मोटी होती है ऐसी अवस्था में कौन सा अङ्ग लेना चाहिये ?

अति स्थूल जटा या: स्युस्तासां ग्राह्यास्त्वचोबुधैः।
गृह्णीयात्सूक्ष्म मूलानि सकलान्यपि बुद्धिमान्॥

जिस वनस्पति की मूल अधिक मोटी हो उसकी छाल लेनी चाहिये और जिसकी मूल अति सूक्ष्म हो उसका पंचांग लेना चाहिये। अर्थात् शालपर्णी पृष्टपर्णी प्रभृति सूक्ष्म मूल वाली वनस्पतियों का पंचांग और श्योनाक पाटला प्रभृति मोटी मूल वाली वनस्पतियों की छाल लेनी चाहिये।

दशमूल के गुण— इस के सेवन करने से ज्वर जनित घोर सूतिका रोग को शांति होती है। यह प्रसूत ज्वर के लिये प्रसिद्ध और चमित्कारिक औषधि है। श्वास खांसी मस्तिष्क—रोग, शोथा अरुचि, हिचकी, पीनस, शिरोरोग, वातजन्य रोग, अपतन्त्रक, मंदाग्नि, ज्वर, विषमज्वर, त्रिदोष तंद्रा, पसलियों की पीड़ा विशेष पसीना आना इन सबको नष्ट करने वाला है।

पिप्पलीचूर्ण संयुक्त वातश्लेष्म ज्वरापहम् ।
सन्निपात ज्वरहरं सूतिका दोष नाशनम् ॥
शोष शैत्यभ्रम स्वेद कासश्वास विकारनुत् ।
हृत्कंठग्रह पार्श्वतितन्द्रा मस्तक शूल हृत् ॥

—शार्ङ्गधर संहिता।

पीपल का चूर्ण डाल दशमूल क्वाथ सेवन करने से वात कफ ज्वर, सन्निपात, प्रसूत, ज्वर; शोष, शीत, भ्रम, स्वेद कास श्वास हृदय और कंठ का रुक जाना पार्श्व पीड़ा तन्द्रा मस्तक शूल नष्ट होता है।

दशमूलं त्रिदोषघ्नं श्वासकास शिरो रुजः ।
तन्द्रा शोथ ज्वरानाह पार्श्व पीड़ा रुचिर्हरेत ॥

—शालिग्राम निघण्टु भूषण ॥

दशमूल—त्रिदोष कास, श्वास शिर का दर्द तन्द्रा शोथ ज्वर अफरा पसुली की पीड़ा अरुचि नष्ट करता है।

दशमूल की व्यवहारविधि—(१) शूल हृदय रोग श्वास में दशमूल के क्वाथ* में यवक्षार रत्ती ४ और सेंधा नमक रत्ती ४ डाल कर पीना चाहिये (२) हृदय-शूल, कटि-शूल, पृष्ठ शूल में दशमूल के क्वाथ में सोंठ रत्ती ४ डाल कर

---

* दशमूल तोले २ को पाव भर पानी में औटाना जब एक छटांक शेष रहे तब छान कर जो अर्क (क्वाथ) रहे उसे ही व्यवहार करना चाहिये।

पीना चाहिये। (३) सूतिका रोग मोह, तन्द्रा, त्रिदोष, में दशमूल के क्वाथ में पीपल छोटी का चूर्ण ४ रत्ती डाल कर पीना चाहिये (४) बातज गलगंड पर दशमूल को पानी में पीस और गरम कर लेप करना चाहिये। (५) त्रिदोषज योनि शूल पर दशमूल बेलगिरी धाय के फूल इनके क्वाथ में रुई का फाया भिगोकर योनि में धारण कराना चाहिये। (६) पक्षाघात में — दशमूल के क्वाथ में सेंधा निमक रत्ती ४ हींग भुनी रत्ती १ डाल कर पीना चाहिये (७) धनुःस्तम्भ में—दशमूल का क्वाथ अंडी का तैल १ तोला डाल कर पीना चाहिये और कटफलादि तैल की मालिश करनी चाहिये। (८) शिर पीड़ा और सूर्यावर्त में इस के क्वाथ में घृत और सेंधा निमक मिला कर नश्य देना तथा शिर शूलाद्रवज्ररस गोली एक खिला कर ऊपर से दशमूल का क्वाथ पिलाने से पुराना रोग भी शान्ति हो जाता है (९) वात कफ ज्वर, श्वास, कासपार्श्व, पीड़ा रोग में दशमूल के क्वाथ में पीपल का चूर्ण माशे १ डाल कर पीना चाहिये।

पंचमूल–लघुपंच मूल और बृहत् पंचमूल दोनों को मिलाने से ही दशमूल बन जाता है। अर्थात् दशमूल की पहिली पांच औषधियों का नाम लघु पंचमूल और पीछे की पांच औषधियों का नाम बृहत् पंचमूल है। आयुर्वेद में इन दोनों के पृथक २ गुण वर्णन किये हैं उनको संक्षेप से हम यहां वर्णन करते हैं।

लघु पचमूल के गुण और प्रयोग–कड़वा, कषेला ग्राही, गरम, वलकारक, ज्वर, खांसी श्वास, अश्मरी, शूल, मन्दाग्नि, आदि रोगनाशक, है (१) गर्भपात होने पर पंचमूल का पेया+बना कर घृत मिलाकर पीना चाहिये। (२) जीर्ण ज्वर में पंचमूल २॥ तोला, दूध पाव भर पानी १ सेर डाल कर औटावे जब पानी जल जाय दूध मात्र शेष रहजाय छान कर और मिश्री मिलाकर रोगी को पिलावे यह कफ खांसी आदि उपद्रव सहित जीर्ण ज्वर को नष्ट करता है बात गुल्म में पंचमूल के क्वाथ में दुग्ध पाव भर शिलाजीत १ माशे मिश्री १ तोले डाल कर पीना चाहिये।

पंचमूलादि क्वाथ—पंचमूल, खिरेटी, वेलगिरी, गिलोइ मोथा, सोंठ पाठा, चिरायता, नेत्रवाला, कुड़ा की छाल, इन्द्रजौ इनको समान भागले और क्वाथ बनाकर पीने से अतिसार, ज्वर वमन शूल सहित तथा श्वास कास आदि उपद्रव दूर होते हैं।

बृहत् पंचमूल के गुण और प्रयोग—कड़वा कषेला गरम, हलका अग्नि प्रदीपक, कफ, बात, कास श्वास,

---

+पेया बनाने की विधि–पंचमूल ४ तोला को एकसेर पानी में औटावे जब पाव भर पानी शेष रहे तब छान कर और उसमें मसूड़मूंग आदि अन्न तोले ५ डाल कर औटावे जब अन्न गल जावे तव ठण्डा कर रोगी को पिलाना चाहिये। —प्रकाशक

ज्वर मेद वायु विकार नाशक है। (१) मेद रोग में पंचमूल के क्वाथ में शहद मिलाकर सेवन करना चाहिये (२) कफ खांसी श्वास में पंचमूल के क्वाथ में अंडी की जड़ का चूर्ण माशे ३ डाल कर पीना हितकारी है।

शास्त्रीय प्रयोग

आयुर्वेद शास्त्र में दशमूल पंचमूल द्वारा अनेक प्रयोग बनाने का विधान है यदि ऐसे सब प्रयोगों का संग्रह किया जाय तो एक बृहत् पुस्तक बन सकती है तथापि अनेक प्रसिद्ध प्रसिद्ध और चमित्कारिक प्रयोगों का वर्णन यहां किया जाता है।

दशमूलादि घृत—वेल की छाल, खम्भारी, पाटला अरणी, श्योनाक, शालपर्णी प्रष्ठपर्णी छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी गोखरू यह दश औषधि मिली हुई एक कुडव घृत १ प्रस्थ, पुष्करमूल, कचूर वेल, त्रिकुटा, हींग, यह प्रत्येक एक एक कर्ष विधि—प्रथम दश औषधियों को १ कुडव ले जौकुट कर १ द्रोण जल में औटावे जब १ आढ़क रह जावे तब छान कर एक कढ़ाई में डाले और उसमें ही घृत डालदे तथा पुष्करमूल से हींग पर्य्यन्त औषधियों को पानी में पीस कल्क बना कर उस घृत को क्वाथ में मिलादे पश्चात् मन्द अग्नि से पका और घृतमात्र शेष रहने पर उतार ले मात्रा—३ माशे से २ तोला पर्य्यन्त रोगी का बलाबल देख कर देवे। गुण—बात कफ की घोर खांसी में तथा सर्व प्रकार

के श्वास रोग में विशेषतयाः वात और कफ की श्वास में विशेष लाभ देता है।

अभिन्यास ज्वरे क्वाथः—काला ज़ीरा, पुष्करमूल, अंडी की जड़, त्रायमाण, सोंठ, गिलोइ, दशमूल, कचूर, काकड़ासिंगी, भारंगी, पुनर्नवा, प्रत्येक दो दो माशे ले जोकुट कर पावभर गो मूत्र में ओटावे जब छटांक भर रहे तब छान कर पिलावे। गुण—स्तोत्रों को शुद्ध करता है अभिन्यास ज्वर में विशेष लाभ देता है।

दशमूलषटपलकघृत—दशमूल का क्वाथ १ आढ़क दुग्ध १ प्रस्थ, पीपल छोटी, पीपलामूल, चव्य, चीते की छाल, सोंठ, यवक्षार, इन ६ औषधियों का कल्क १ कुडव घृत १ प्रस्थ सब को मन्द अग्नि से पाक करे जब सिद्ध हो जाय उतार छान कर रक्खे। गुण—ज्वर, कास, मन्दाग्नि, वात व्याधि, प्लीहा नाशक है।

बृहत् पंचमूलादिघृत—बृहत् पंचमूल, बड़ी कटेरी निशोथ अंडी की जड़ प्रत्येक एक एक पल, लोध आधा प्रस्थ जल १ द्रोण घृत १ प्रस्थ, दही १ आढ़क, यवक्षार ३ पल,

---

१ कुडव १६ तोला। १ प्रस्थ एक सेर १ कर्ष १ तोला १ द्रोण ४ आढ़क का १ आढ़क २५६ तोला का टिप्पणी—शास्त्रकारों ने घृत सिद्धि का समय ५ दिन का बतलाया है।

विधि—पंचमूल से लोध तक की औषधि जोकुट कर १ द्रोण पानी में औटावे जब चौथाई जल रहे तब छान कर उस में घृत दही यवक्षार मिला कर घृत पाक विधि से सिद्ध करे। गुण—योनिरोग और गुल्म रोग, उदर रोग में विशेष लाभ दायक है।

महापंचगव्य घृत—दशमूल, अपामार्ग, त्रिफला, कुड़ा की छाल, हल्दी, दारुहल्दी, कमलिनी, कुटकी, अमलतास का गूदा, धमासे की जड़, कुलथी, गूलर की जड़, सतपर्णी, मोख, निशोथ, हिज्जल की छाल, भारंगी, षड्नव मल्लिका, वावची, पाठा, अधियाघास, दन्ती, चित्रक, चिरायता, मूर्वा, त्रिकुटा, लाल और श्वेत अनन्तमूल, गो दुग्ध गोवर का रस, तक्र, गोमूत्र, दही, [विधि]—दशमूल से मोख तक की औषधि एक एक पल ले जवकुट कर १ द्रोण जल से औटावे और जब चतुर्थांश शेष रहे तब छान कर रक्खे। पुनः निशोथ से अनन्तमूल तक की औषधि एक एक कर्ष ले जल में पीस कल्क बना उस छने हुये क्वाथ में मिलावे तथा घृत १ प्रस्थ, दूध, गोवर का रस, दही, तक्र, गोमूत्र, एक एक प्रस्थ ले सब को एकत्र कर मन्दाग्नि से पचा घृत सिद्ध करे। गुण—यह अमृत के समानगुणप्रद है। यन्त्र सिद्धि वाले मुनीश्वर की तरह चातुर्थिक ज्वर को दूर करता

---

१ पल ४ तोला से रोहिषतृण को अधियाघास कहते हैं और निचुल को हिज्जल कहते हैं।

है। शोथ, पांडु, प्लीहा, अर्श, भगन्दर, उदर, गुल्म आदि को नष्ट करता है।

ग्रहण्यां मूलासव—दोनों पंचमूल, हल्दी, जीवक, ऋषभक, ज़ीरा प्रत्येक पांच पांच पल, जल ४ द्रोण, गुड़ दोसौ पल, फूल प्रयंगु, मोथा, मजीठ, वाय विडंग, मुलेहठी पिलखुन की छाल, लोध, सावर, यह प्रत्येक दो दो पल, शहत १ प्रस्थ। विधि—पंचमूल से ज़ीरा पर्य्यन्त की औषधियां ले जवकुट कर पानी में औटावे जब चतुर्थांश पानी शेष रहे तब छानकर उसमें शहत गुड़ तथा फूल प्रयंगु से सावर तक की औषधियां जवकुट कर डाल मिट्टी के पात्र में भर १५ दिन भूमि में रख आसव बनावे। गुण—अग्नि को दीप्त करने वाला ग्रहणी को नष्ट करने वाला है। हृदय रोग, कफ, पांडु रोग में भी उत्तम है।

द्विपंचमूलादि तैल-दशमूल, हरड, बहेड़ा, आमला, चित्रक देवदार, पाठा, अपामार्ग, रास्ना, मकोय, खिरैटी, भारंगी, प्रष्टपर्णी, निशोथ, भांग, इन्द्रायन की जड़, खस, खम्भारी, भिलावा, अशोक की छाल, शालपर्णी, प्रष्टपर्णी, क्षीरकांकोली, मूर्वा, गिलोइ, सितावर, यह प्रत्येक पांच २ पल ले सबको जल १२ सेर में औटावे जब अष्टमांश शेष रहे तब छानकर ४ सेर तिल का तैल डालकर तथा कूठ, सौंफ, त्रिकुटा, चित्रक, त्रिफला, देवदार, अगर, वायविडंग, मोथा, असगंध, प्रष्टपर्णी, पाठा,

मूला, पीपल छोटा, अदरख, दन्ती, हींग, अमलवेंत यह प्रत्येक चार चार तोले ले सब का कल्क करके उस तैल में डाल के पचावे जब सिद्ध होजाय तब उतार कर छान ले। गुण—इसको नस्य पान, मालिश द्वारा उरःस्तम्भ, आमवात, शीतवात, क्षुद्र-वात दूर होते हैं।

महा दशमूल तैल—दशमूल १०० पल को जल एक द्रोणमें ओटावे जब चतुर्थांश शेष रहे तब एक आढक कडवा तैल डाल और जंभीरी धतूरा अद्रक इन तीनों का स्वरस एक आढक मिलावे पश्चात् निम्नलिखित औषधियों का कल्क बनाकर डाले। पापर, गिलोइ, सौंफ, पुनर्नवा, सहजने के बीज, कुटकी, पीपल की छाल, कंजा की छाल, काला जीरा, सरसों, वच, सोंठ, पीपर बड़ी, चीते की छाल, कचूर, देवदार, खिरेटी रास्ना, कायफल, निर्गुंडी संभालु गेरू, पीपरामूल, चव्य, शुष्कमूली, अजमायन, सफेद जीरा, कूठ, अजमोद, ताड़ की छाल, यह प्रत्येक एक एक पल। तैल बिधि से तैल सिद्ध करे। गुण—शिर दर्द के लिये प्रसिद्ध तैल है। मर्दन से कफ विकार नष्ट होते हैं, सेवन से कास नष्ट होती है, शोथ के लिये भी उत्तम है।

दशमूलारिष्ट—दशमूल २॥ सेर चित्रक १। सेर पुष्करमूल १। लोध १ सेर गिलोइ १ सेर आमले ६४ तोले जवासे की जड़ ४८ तोले खैर की छाल, विजयसार, हरड प्रत्येक बत्तीस बत्तीस तोले कूठ मंजीठ, देवदार, वायविडंग, मुलेठी, भारंगी, कैथ, वहेड़ा, पुनर्नवा, चव्य, वालछड़, फूलप्रयंगु, सारिवा, काला

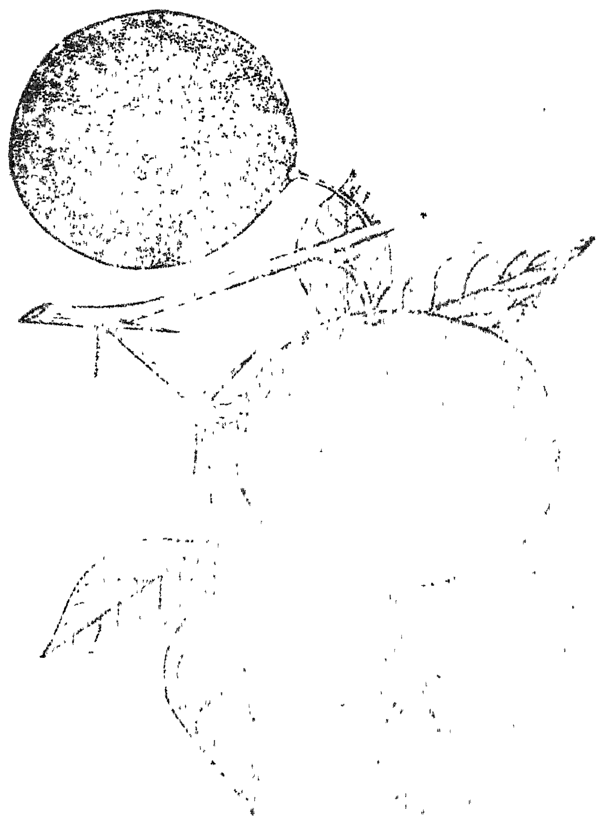
जीरा, निशोथ, रेनुका, पीपल छोटी, रास्ना, सुपारी, कचूर, हल्दी, सौंफ, पद्माख। नागकेशर, मोथा, इन्द्र जौ, काकड़ासिंगी, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, चीरकाकोली, ऋद्धि वृद्धि, यह प्रत्येक आठ आठ तोला सबको जवकुट २॥)४ दोमन चौबीस सेर पानी में औटावे जब ॥)६ छब्बीस सेर रहे छानकर रक्खे पश्चात् मुनक्का ३ सेर को बारह सेर पानी में औटावे जब ४ सेर शेष रहे तब छान कर पूर्व क्वाथ में मिला दे। शहत १२८ तोले गुड़ ५ सेर धायके फूल ऽ१॥ कंकोल नेत्रवाला, चंदन, जायफल, लौंग, दालचीनी, इलायची छोटी, तेजपात, नागकेशर, छोटी पीपल, यह प्रत्येक आठ आठ तोला ले जवकुट कर मिलावे। कस्तूरी माशे ३ थोडे से पानी में पीस मिलावे। और एक मट्टी के पात्र में भर जमीन में गाड़ अरिष्ट बनावे। गुण—वीर्य्य वर्द्धक पुष्ट-कारक, मस्तिष्क शक्ति दायक, प्रसूती स्त्रियों के लिये गुणकारी है।

दशमूल के दस वृक्षों का प्रथक २ वर्णन

प्रान्तीय भाषाओं के नामों का सांकेतिक चिन्ह—

चिन्ह	—पूरा नाम	सांकेतिक चिन्ह-	पूरा नाम	सांकेतिक चिन्ह-	पूरा नाम
स०	संस्कृत	उ०	उत्कीली	द्रा०	द्राविड़ी
हि०	हिन्दी	प०	पंजाबी	गु०	गुजराती
व०	वंगला	तै०	तैलंगी	यु०	युनानी
मं०	मरहठी	ता०	तामिली	E.	अंग्रेज़ी
मा०	मारवाड़ी	अ०	अर्वी	L.	लेटिन
फा०	फ़ारसी	क०	कर्णाटकी		

दशमूल—



बिल्व (बेल)

१ वेल

स० विल्व, शारिडल्य, शैलूष, मालूर, श्रीफल, इत्यादि ,व० प० म० वेल हिं० श्रीफल, वेल गु०, विलि, विलु विलो क० वेल्लवन, वेलु, विलपत्री, तै० मारडु, मारेडी, पंदु विल्व, मारेडु ता०, विल्व मा० वील, वीलो, द्रा० विल्वं, फा० नारवां, अ० सफर जले हिन्दी ।

E. The Bael, Bel fruit tree, The Bengal quince

L. Aegle marmelos, bralaeva marmelos.

विवरण-वेल का वृक्ष साधारण वृक्षों की भांति ५० फ़ीटसे भी अधिक ऊंचा होता है और प्रायः सब प्रान्तों में पाया जाता है, विशेषकर बंगला, विहार, अवध, झेलम से आसाम तक ब्रह्मा; मध्य और दक्षिण हिन्दुस्तान आदि प्रदेशों में अधिक होता है। इसके पत्ते शाखाओं पर विषमवर्ती लगते हैं पत्र दंड प्रायः एक इंच से २ इंच तक लम्बे होते हैं शाखाओं पर पत्र दंड कहीं एक, कहीं दो, किसी स्थान पर तीन और कहीं चार तक एक साथ लगते हैं। प्रत्येक पत्र दंड पर तीन २ पत्ते आते हैं इसका पत्ता प्रायः कसौंदी के पत्ते के आकार का तथा उस से कुछ लम्बा होता है, एवं बीच वाले पत्ते और दो पत्तों से कुछ बड़े

हाते हैं पत्र दंडों के नीचे कीकर (बबूर) के कांटे के समान एक २ जोड़े कांटे रहते हैं । ये कांटे बबूर के कांटे से मोटे और दृढ़ होते हैं नई टहनियों के कांटे बहुत तीक्ष्ण होते हैं । ज्यों २ शाखें पुरानी होती जाती हैं त्यों २ कांटे की नोंक झड़ती जाती है और अन्त में पुरानी शाखें कंट विहीन होजाती हैं फागुन चैत में पुराने पत्ते गिर जाते हैं। और चैत बैसाख में नवीन पत्ते क्रम से निकल आते हैं। इस वृक्ष के पत्ते नीरस होते हैं यही समय इसके फूलने का है किंचित हरियाली लिये सफेद रंग का फूल लगता है और उससे मधु के समान मन्द गन्ध निकलती है । फल पहले सूक्ष्म गोल लगते हैं और वे बढ़ते २ खरबूजे के आकर वाले हरे रंग के कठोर छिलके सहित होजाते हैं फागुन चैत तथा बैसाख तक ये फल पकते हैं पकने पर इनका रंग फीका पीला हो जाता है। छोटे बड़े फलों के भेद से यह कई प्रकार का होता है। कोई २ फल तोल में ४–५ सेर तक होता है। बड़े फलों की अपेक्षा छोटे फलों में बीज अधिक होते हैं, एवं छोटे फलों की अपेक्षा बड़े फल सुस्वाद होते हैं। इनकी गिरी नारंगी रंग की होती है, गिरी के बीच बिनौले के समान लसयुक्त बीज होते हैं कच्चे बेल फल औषधी प्रयोग में आते हैं और पक्के फलों को लोग खाते हैं । बीजों से पौधे उत्पन्न होते हैं । इसकी जड़ की सोरियां भूमि के भीतर दूर तक फैलती हैं कहीं २ वे अंकुरित होकर पौधे रूप में बढ़ती हैं। बरसात

में इसकी जड़ की मिट्टी खोद पौधे के दोनों ओर सोरियों को क्रम क्रम से काट कर फिर मिट्टी से ढाँक कुछ दिनों तक छोड़ देते हैं; कातिक अगहन में उसको वहां से उठा स्थाई रूप से रोपण करते हैं। उचित परिचर्य्या से यह वृक्ष खूब बढ़ता है। और फल भी बीज वृक्ष के फलों की अपेक्षा अच्छे लगते हैं। इस वृक्ष की छाल सफेद रंग की होती है और औषधी प्रयोग में आती है।

गुण दोष--वृक्ष कड़वा, कषेला, मलरोधक, रूखा अग्नि बर्द्धक, हलका, गरम, पाचक, पित्तजनक, बलकारी, मधुर, रुचिकारी, दीपन, ग्राही, चरपरा, भारी, तथा बात, कफ, बातातिसार और ज्वर को दूर करने वाला है।

वेल फल कच्चा--स्निग्ध, भारी रुचिकारी, पाचक, मलरोधक, कड़वा, हलका, गरम, कषेला, अग्नि, प्रदीपक, तथा शूल, आम, बात संग्रहणी और कफातिसार को शांत करने वाला है।

वेल फल डंभक (मध्यम वा तरुण अवस्था का)

ग्राही कषेला, खट्टा, स्निग्ध, चरपरा, तीखा, गरम, हलका, पाचक दीपन हृदय को हितकारी, तथा कफ और बात नाशक है।

वेल फल पक्का--दाह कारी, मधुर, भारी, कषेला कड़वा गरम ग्राही, चरपरा, विष्टंभकारी, वातकारक, कठिनता

से पचने वाला, एवं त्रिदोष और मंदाग्नि को उत्पन्न करने वाला है।

वेल की जड़— मधुर, हलकी, तथा त्रिदोष, वमन शूल सुज़ाक, बात, कफ, और पित्त को शांत करने वाली एवं सर्प विष नाशक है इसकी छाल को दशमूल के काढ़े में देते हैं।

बेलकी का लकड़ी— बहुत पवित्र और चन्दन के समान मानी जाती है।

वेल के पत्ते— ग्राही, रोचक, तथा कफ, बात, आम और शूल रोग को दूर करने वाले हैं। इसको पीस कर नेत्र पर लगाने से आंख के रोग नष्ट होते हैं और जल में पका अरिष्ट बना कर सेवन करने से ज्वरादि रोग का नाश होता है। अर्क बालकों को दस्त लाता और कफ को दूर करता है।

वेल के फूल— अतिसार, प्यास, और वमन नाशक हैं।

वेल के बीज— आयु और शरीर वर्द्धक हैं।

वेल के बीजों का तेल- गरम, बुद्धि वर्द्धक, हृदय और मस्तिष्क को हितकारी तथा वात नाशक है।

वेल कांजो में रक्खा हुआ— रुचिकारी, अग्नि प्रदीपक हृदय को हित कारी तथा आम बात का नाश करने वाला है।

वेल का अर्क— हलका, गरम, पाचक, बलकारी तथा कफ नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण दोष—पहले दर्जे में गरम और दूसरे में रूक्ष, वर्द्धक, हृदय, यकृत और आमाशय को बलकारी जीर्णातिसार का वर्द्धक आम और स्निग्धता को हरण करने वाला। विशेष कर विष्टंभ का नाशक है। इसका लेप त्वचा में दोनों को उत्पन्न करने वाला। शोथ को लयकारक तथा यह (बेल) रोध और बवासीर को उत्पन्न करने वाला। **दर्प-नाशक** खांड़, मात्रा १ से ५ तोले।

प्रयोग—(१) बेल पत्र शिवजी को अत्यन्त प्रिय हैं वे इस के चढ़ाने से प्रसन्न होते हैं। संसार में एक से एक उत्तम वस्तुएं थीं पर शिवजी ने इसी को क्यों पसन्द किया? अवश्य ही इस में अद्भुत शक्ति है। इसीलिये शिवजी ने इस को ग्रहण किया है। बेल से अनेक प्रकार के रोग दूर होते हैं। प्राचीन काल में इसके पत्ते खाकर तपस्वी लोग वर्षों रहते थे। अनेक साधु सन्यासियों की सम्मति है कि भांग के समान पत्तों को पीस कर पीलेने से बहुत दिनों तक बिना अन्न के मनुष्य जीवित रह सकता है। पाचन शक्ति के अनुसार पावभर से आध सेर तक सेवन करते थे इससे मल मूत्र बहुत कम होता है और शरीर भली भांति स्थिर रह सकता है। बेल पत्र से अतिसार नष्ट होजाता है, हृदय और मस्तिष्क को लाभ पहुँचाता है और अनेक रोगों में चमत्कारिक गुण दिखलाता है।

बेल दस्तों के लिये बहुत उपकारी वस्तु है। पके हुए बेल के बीजों से तैल निकाला जाता है। यह तैल बुद्धि वर्द्धक एवं हृदय और मस्तिष्क को अति लाभकारी है इसके बीजों में आयु बढ़ाने की भी शक्ति है। कहते हैं शरीर को बढ़ाने में ये बीज बहुत उपकारी होते हैं, ये अभ्रक कस्तूरी और मोती से अधिक गुणकारी हैं।

(२) इस का फल प्रतिश्याय और अतिसार में अधिक लाभकारी है, परन्तु तीव्र आमातिसार में इतना गुणकारी नहीं है। इस के पके फल के गूदे को यों ही अथवा चीनी के साथ खाते हैं इसका शर्वत स्वादिष्ट होता है परन्तु पचने में भारी होता है इससे पित्त बिगड़ कर खट्टी डकारें आने लगती हैं, एवं हृदयमें दाह उत्पन्न होता है। इसको कुछ दिनों तक बराबर खाने से अर्श रोग होजाता है किन्तु चीनी के साथ खाने से यह रोग नहीं होता। पक्के ताजे फलों की गूदी लुआबदार ग्राही और कुछ खट्टी होती है और अतिसार में उपकारी होती है। पके हुए फलका शर्वत हलका, सारक और ठंडा होता है। उस में थोड़ा दही अथवा इमली और चीनी मिलाने से कुछ खट्टास आजाती है, इस से इसकी शीतलता और विरेचन की शक्ति बढ़जाती है। इसके शर्वत को विशूचिका और दस्त की बीमारी में प्रयोग करते हैं और लाभकारी होता है। कच्चे फलों की गिरी बहुधा औषधि प्रयोग में लाई जाती है और इसी का मुरब्बा बनता है।

(३) तलवोंकी जलन पर-कच्चे फल की गिरी को तिल के तेल में ७ दिन तक भिगो, उस तेल का शरीर तथा तलवों पर मर्दन कर स्नान करना ।

(४) अतिसार पर-कच्चे फल की गूदी का काढ़ा देना, गुण वृद्धि के लिये किंचित् अफीम मिला देना ।

(५) पुराना अतिसार-और आमातिसार पर कच्चे फल को भूभल में पका उसकी गूदी को मिश्री के साथ खिलाना ।

(६) पित्तातिसारमें-इसका मुरब्बा खिलाना ।

(७) मूत्रकृच्छ्र पर-ताजे फल के गूदे को दूध के साथ पीस, मल छान, उसमें शीतल चीनी का चूर्ण मिलाकर पिलाना इससे मूत्र की वृद्धि होती है ।

(८) पुराने अतिसारमें—कच्चे फल को भूभल में कुछ पका, छिलके सहित कूट उसमें अनुमानानुसार जल और थोड़ी मिश्री मिला, छानकर पिलाना ।

(९) बालकके पुराने अतिसार पर-कच्ची गिरी १ रत्ती, ढाक का गोंद १ रत्ती और मिश्री २ रत्ती जल में पीस मन्द अग्नि पर पकाय, गाढ़ा करके चटाना ।

(१०) अतिसार और आमातिसारमें—इसका मुरब्बा खिलाना ।

(११) कोष्ठ वद्धता पर-इसकी जड़को अष्ट गुण जल में चतुर्थांश काढ़ा बना पांच तोले की मात्रा से सेवन करना, यह वद्धकोष्ठ प्रकृति वालों को हितकारी है।

(१२) फोड़ों पर—पत्तों को पानी से पीस कर पुल्टिस बांधना।

(१३) ज्वर और सूखी खांसी पर—इसके पत्तों का काढ़ा देना।

(१४) हृदयकी धड़कन और उन्माद पर—इसकी जड़ की छाल का काढ़ा देना।

(१५)नेत्रपीड़ा और आंखोंसे अधिककीच आना इसके पत्तों की पुल्टिस बांधना।

(१६) संग्रहणी-कच्चे फल को भूभल में पका एक तोले की मात्रा से शक्कर मिलाकर खिलाना।

(१७) रक्तातिसार पर—उक्त भूभल में पके बेल को गुड़ के साथ खिलाना।

(१८) प्रवाहिकामें—सम भाग कच्चे फल की गिरी और तिल के कल्क में दही और स्नेह पदार्थ मिलाकर खिलाना।

(१९) शरीरकी दुर्गन्धि पर—पत्तों के रस का मर्दन करना।

(२०) त्रिदोषकी बमन पर—छाल के काढ़े में मधु मिला कर पिलाना।

(२१) गर्भवती स्त्रीकी छर्दि पर—कच्चे फल के गूदे को चावलों के धोवन के साथ पीस कर पिलाना।

[२२] गर्भवतीस्त्री के वातरोग पर—इसके गूदे और अरनी का काढ़ा देना।

(२३) अतिसार पर—फलका अर्क पिलाना।

(२४) पांडु, शोथ, बद्धकोष्ट, अर्श, और कामला पर—पत्तों के रस में काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर पिलाना।

[२५] वधिरता पर—इसके गूदे को गोमूत्र में पीस जल और दूध सहित तेल में पका कर कान में डालना।

वेलगिरी:-कच्चे वेल फल की सुखाई हुई गूदी को कहते हैं। कच्चे फल के छिलके को उतार व गूदे को कतर कर धूप में सुखा डालते हैं।

गुण दोष—हलकी, मलरोधक, बलकारी तथा कफ, वात, आम, शूल, प्रवाहिका, अतिसार और ग्रहणी को नष्ट करने वाली है।

प्रयोग: [१] तीक्ष्ण आमातिसारमें—इसके चूर्ण को अधिक मात्रा से सेवन करना। इससे आम बंद होकर मल

आने लगता है फिर दस्त की संख्या कम करने के लिये, इस चूर्ण में कुछ अफीम मिलाकर देना।

[२] शीत ज्वर, व्रणादिक से उत्पन्न हुए ज्वर, जिस ज्वर का कारण निश्चय न हो तथा सब प्रकार के ज्वर में—इसके चूर्ण की फंकी देना, इससे ज्वर का बेग कम हो जाता है।

[३] अतिसार में—इसके चूर्ण की १। माशे से ४ माशे तक की मात्रा से दिन में आवश्यकतानुसार ३ बार ६ बार तक देना।

[४] पुराना अतिसार और आमातिसार पर बेलगिरी, आम की गुठिली, कत्था ईशव गोल की भूसी, बादाम की मिंगी और शक्कर के साथ सेवन करना।

(५) प्रयोग नं० ३ और ४ हलके, ग्राही, मरोड़े को दूर करने वाले, आरोग्यता को बढ़ाने वाले दस्त के बेगों की संख्या और मवाद को धीरे २ कम करने वाले हैं।

(६) बमन और अतीसार पर—इसके बराबर आम की गुठलियों के चूर्ण में शक्कर और मधु मिलाकर चटाना।

(७) अतीसार पर इसे कत्थे के चूर्ण के साथ सेवन कराना।

——:०:——



अग्निमथ (अरणी बड़ी)

२ अरणी

स० अग्नि मन्थ, श्रीपर्णी, गणिकारिका, जया, तरकारी इत्यादि ।

हि० अरनी, अगेथु, गणियारी, गनियार, गनियारी, गनियल ग नियाल, गनिअल, व० गानिर, गनियारि, गनिर, आग गान्त म० टाकला, टांकली, थोर एरण, मा० अरणी प० अगेथु गनि-यार गु० अरणी एरड क० बन्नि मर, नकवल तै० नेली चेट्टु नरुम उटि, नरुवलु, द्रा० तलुताले, मुनै वन्हि मरम् फा० गनियार ।

E, Premna seratifolia.

L. Clorodrudrou phlmodis, Premna entigrifdia

विवरण:—बृहत्यञ्च मूल के चार वृक्षों के समान अरनी का वृक्ष विशाल नहीं होता । इस का वृक्ष ३०—३५ फीट तक ऊँचा होता है । यह वृक्ष जड़ से ही प्रायः तीन शाखों सहित निकलता है । इस लिये इसका स्तम्भ बहुत मोटा नहीं होता इस के पत्ते टहनियों पर आमने सामने लगते-हैं । नये पत्ते कालीजीरी के पत्ते के समान किनारे कटे हुए अनी दार कंगूरेदार और बेल के बड़े पत्ते के बराबर होते हैं । परन्तु पत्ते पुराने होने पर कंगूरे बहुत कम दीख पड़ते हैं । ये पत्ते के समान करकर होते हैं । माघ फागुन में जब इसके पत्ते गिरजाते

हैं तब यह वृक्ष थोड़े दिनों तक पत्र विहीन दीख पड़ता है। धीरे २ नवीन पत्ते निकलने लगते हैं और चैत वैसाख तक फिर यह हरा भरा सुहावना हो जाता है। तर भूमि वाले वृक्ष के पत्ते जल्दी निकलते हैं पर जो वृक्ष ऊसर तथा सूखी ज़मीन में होता है उसका पत्ता कुछ विलम्ब करके निकलता है। चैत-बैसाख में यह वृक्ष फूलता फलता है। छोटे २ फूल झूमकों में लगते हैं और ये नीलापन लिये सफेद रंग के होते हैं। ये पांच पंखड़ी वाले बाहर (आच्छादन) से ढके हुऐ होते हैं इनकी गन्धि अच्छी नहीं होती। फल मकोय के फल के समान झूमकों में लगते हैं वे कच्चे में हरे और पकने पर काले हो जाते हैं और उनमें सूक्ष्म बीज होते हैं फल वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में गिरजाते हैं और इनकी सूखी बारीक सींकें झूमकेदार टह-नियों पर लगी रहती हैं। वे भी धीरे २ गिर जाती हैं। पानी पड़ने पर फलों से पौधे उत्पन्न होते हैं पहले कहा जा चुका है कि जड़ ही से वृक्षों की कई शाखें होती हैं॥ इसका कारण यही है कि फल में अनेक सूक्ष्म बीज होने से वे एक साथ अंकुरित होकर पौधे तैयार होते हैं। यदि इसकी आबादी पर कुछ ध्यान दिया जाय तो यह वृक्ष कुछ और बड़ा मोटा स्तम्भ वाला हो सकता है जहां इसका जंगल होता है वहां ये वृक्ष एक दूसरे के साथ इस प्रकार सङ्गठित रहते हैं कि इनका पार करना कष्ट साध्य होजाता है, इनकी पुरानी शाखाओं पर जो नई टहनियाँ निकलती हैं वे प्रायः सूख कर झड़ जाती

हैं और इनके शेष भाग ३—४ इंच लम्बे जो उन पर लग रहते हैं, वे मजबूत कांटे के समान हो जाते हैं। इसकी लकड़ी भी मज़बूत होती है॥ पुरानी टहनियों पर भी छोटे २ उक्त प्रकार के कांटे होते हैं सीधी टहनियों को काट कर छड़ी बनाते हैं। सफ़ेद रङ्ग की छड़ी पर, उन कांटों के स्थान् पर धूसर रङ्ग की गांठे अच्छी मालूम होती हैं इसकी शाखें और छाल सफेद रङ्ग की होती हैं। जड़ की छाल ही औषधी प्रयोग में ली जाती हैं। मात्रा ३ माशे से १ तोला। प्रतिनिधि अरनी छोटी।

यह बंगाल, बिहार, मध्यप्रदेश, अवध, गढ़वाल, राजपूताना, दक्षिण हिन्दुस्तान, बम्बई और सिलोन तथा अन्यान्य प्रान्तों में होती है।

गुणदोष—कटु, तिक्त, कषाय, उष्णवीर्य्यं, मधुर, अग्नि वर्द्धक, तथा कफ, बात, मेद रोग, आमदोष, जुकाम, सूजन, बवासीर, आमवात, मलावरोध, अग्निमन्दता, पाण्ड रोग और विष विकार का नाश करने वाली है।

इसका अर्क—शोथ, कृमि, पांडु और कफ नाशक है।

प्रयोग—(१) इसकी जड़ कड़वी और अग्नि वर्द्धक है, इसके प्रयोग से पेट का शूल, ज्वर, जलोदर और शरीर का ढीलापन सहित सब प्रकार की सूजन नष्ट होती है।

(२) उदर रोग में इस की जड़ को पानी में पीस घी के साथ चाटना चाहिये।

(३) ज्वर रोगी के आमाशय की शूल में इसका काढ़ा दो तीन बार दिनमें पिलाना।

(४)–ढोलीसूजनपर जड़को पुनर्नवे–की जड़ के साथ पीस गरम कर लगाना।

(५)–मंदाग्नि में–इसके काढे में सोंठ का चूर्ण मिलाकर पिलाना।

(६)–पेट का शूल और आध्यमान में इसके पत्ते का प्रयोग करना।

(७)–हृदय की निर्वलता पर इसके पत्ते और धनियां दोनों का काढ़ा देना।

(८)–आमाशय की शूल में पत्ते का काढा देना।

(९)–बातजपीड़ा में पत्तों का शाक खिलाना।

(१०)–सर्दी में इसके पत्तों को काली मिरच के साथ पीस कर पिलाना।

(११)–कोष्ठ वद्धता में–इस के पत्ते और अरहर की छाल का काढा देना।

(१२)–बवासीर पर—इसके पत्तों को पीसकर पुल्टिस बांधना।

(१३)–गठिया और स्नायु कीवातज पीड़ा में इसके पंचाङ्ग का काढा पिलाना।

(१४)–शीतपित्त में इसकी जड़का चूर्ण घृत साथ सेवन करना।

(१५)–स्वप्न प्रमेह और वासाप्रमेह में इसका काढ़ा पिलाना



अरणी छोटी

सं० क्षुद्राग्नि मंथ, तपन, अरणी, रक्ताङ्ग इत्यादि,
हि० छोटी अरणी टेकार, टकारी, व० छोटी गलियरी
म० लघुअरणी नर बेल, रहांकल, नरबेलर, टाक
क० ली तिल्ली, बल्लि को०तल्ली तै० चिरि नोल्ले चेट्टु निल्लि
तलुकि० कूरनिल्ली, गु० नहानी अरनी द्रा० तलूदलेल ।
L, Premna spinosa, Clebrodirdrons phlomoide.

विवरण—इसका वृक्ष ६—१० फीट तक ऊंचा होता है, माली लोग इसके पुष्प वृक्षों में गणना कर, इसके फूलों को और फूलों की भांति पूजा इत्यादि के काम में लाते हैं इस लिये बाटिकाओं में भी लगाते हैं । वारी तथा खेत को पशुओं से बचाने के लिये, नीलकांटा, मेहदी इत्यादि के समान उसके किनारे पर रोपण कर देते हैं। यह वृक्ष झारदार होता है और भारत वर्ष के प्रायः सब प्रान्तों में पाया जाता है विशेष कर बंगाल बिहार, मध्य प्रदेश अवध पंजाब, सिन्धु मेवाड़, सिलोन आदि प्रदेशों में अधिक होता है । इसके पत्ते अरनी के पत्तों के समान पर इनसे छोटे गोलाकार और आगे को कुछ सिकुड़े होते हैं। ये टहनियों पर अनियमित

लगते हैं किसी पर विषमवर्ती किसी पर आमने सामने जड़ में किसी पर तीन २ पत्ते टहनियों को तीनों ओर एक साथ एवं किसी पर ४ पत्ते चारों ओर से लगे रहते हैं। प्रायः शीत ऋतु में इस में फूल आना आरम्भ होता है, और गर्मी तक फूलता फलता है। इस के श्वेत वर्ण पांच दल वाले फूल होते हैं और उन से सुगन्धि आती है। काले रंग के छोटे छोटे नीरस फल लगते हैं और उनमें ३-४ बीज होते हैं। बीजों से पोधे उत्पन्न होते हैं। वृक्ष की पतली २ सोरियां जो भूमि में दूर तक पसरती हुई रहती हैं, वे भी अंकुरित हो पोधे रूप में हो जाया करती हैं और उनसे नवीन वृक्ष तैयार हो जाते हैं। अन्यान्य ८, १० फीट ऊंचे वाले वृक्षों की अपेक्षा इस की जड़ मोटी होती है। इसकी छाल भूरे रंग की और स्वाद में कड़वी होती है। जड़ की छाल औषधी प्रयोग में ली जाती है। जहां पर अरनी नहीं मिलती वहां इसी को व्यवहार में लेते हैं। यह "टेकारी" के नाम से प्रसिद्ध है।

गुण दोष—इसकी जड़ रुधिर शोधक और बल वर्द्धक है इस के गुण अरनी के समान हैं, विशेषकर लेपन, उपनाह और सूजनमें अधिक गुणदायक है। प्रतिनिधि अरनी, मात्रा ३ माशे से १ तोला।

प्रयोग--(१) रुधिर शुद्ध करने के लिये—इसके पत्तों के रस में मधु मिलाकर पिलाना।

(२) पुराने उपदंश में—पत्तों का सवा तोला रस दिन में दो बार कुछ दिनों तक पिलाना।

(३) अतिसार और कृमि रोग पर—उपर्युक्त प्रयोग गुणकारी है।

(४) चौपायों के आध्यान पर—इसका पंचाग खिलाना।

(५) घाव पर—पत्ते को पीसकर लगाना।

(६) ज्वर में—इसका काढ़ा देना।



३ सोना पाठा

स० श्योनाक, शोषण, नट, कटवङ्ग, टुण्टुक, अरलु, पृथु शिम्ब इत्यादि, हि० सोना पाठा, सोना पट्ठा, शोनाक, सोनाक, सोन-पत्ता, टेंटु, टैंटु, टेंटू, टैंटू, अरलु, अरलू, अर्लु, ब० सोना. शोना, शोनागाछ, सोनालु, शोनालु. म० टेंटु, डिंडा, दिंडा, गु० अरडूशो मरट्य, मरड्य, क० शोणा, शोडिल मर, हेग्गुग्गाटे, तै० पेद्दामानु दुन्दिलमु, उ० फणफणा, प० मुलिन, ता० पन, नेपाल० करुमकंद।

L. Bignonia Indica, Oroxylum, Indicum Calo. santhes Indica.

विवरण—सोना पाठे का वृक्ष बहुत ऊंचा और विशाल होता है, भारतवर्ष के प्रायः सब प्रान्तों में पाया जाता है, परन्तु अधिक परिमाण से नहीं मिलता। कहीं एक दो वृक्ष देखने में आते हैं। इस वृक्ष की लकड़ी सेमल वृक्ष के समान हलकी और सार रहित होती हैं। फूल फल इत्यादि भी औषधि प्रयोगके सिवा किसी काम में नहीं आते, इसलिये इसकी आबादी पर ध्यान नहीं दिया जाता है। किसी २ वाटिका में नमूने के लिये एक दो वृक्ष लोग लगाते हैं। औषधि प्रयोग के लिये अब इसकी आबादी पर कुछ वैद्यों का ध्यान भले ही आकर्षित हुआ हो।

दशमूल—



श्योनाक

वृक्ष की डालियों पर १॥—२ हाथ की लम्बी प्रधान सींकें कुछ झुकी हुई लगी रहती हैं। ये सीकें बहुधा आमने सामने जोड़े में होती हैं। परन्तु कहीं तीन सींकें डाली के तीनों ओर और कहीं विषमवर्ती देखने में आती हैं। प्रत्येक प्रधान सींक पर पांच २ गांठें होती हैं और प्रत्येक गांठ पर सींकों के जोड़े होते हैं। पहिली सींक पर चार गांठें सींकों सहित क्रम क्रम से छोटे होते हैं। इनमें पहली गांठ पर तीन जोड़े पत्ते दूसरी और तीसरी गांठ पर एक २ जोड़े और चौथी गांठ पर तीन पत्ते लगे रहते हैं। दूसरी और तीसरी सींकों पर भी पत्ते सींकें सहित उक्त प्रकार सजे सजाये रहते हैं। चौथी गांठ वाली सींक पर पांच २ पत्ते दो जोड़े और एक छोड़ पर लगते हैं। पांचवीं पर तीन पत्ते एक जोड़े और एक छोड़ पर होते हैं, और इसी प्रकार अन्त में तीन पत्ते लगे रहते हैं।

अब हम अपने पाठकों का ध्यान इसके चित्र की ओर दिलाते हैं। जड़ में तीन सींकों के चिन्ह हैं, उन के ऊपर एक जोड़े प्रधान सींक है इन में दाहिनी ओर की सींक, क्रम क्रम से छोटी सींक और पत्तों के सहित हैं। प्रथम जोड़े सींक पत्ते सहित दीख पड़ती है, परन्तु दूसरी और तीसरी सींक स्थानाभाव से पत्र विहीन हैं। चौथी और पांचवीं जोड़े सींक पत्ते सहित है तथा अंत में तीन पत्ते लगे हैं।

कतिपय ग्रन्थकार अपने ग्रन्थों में इन सीकों और पत्तों की तुलना निम्ब वृक्ष की सींक और पत्तों से की है, परंतु यह कथन भ्रमात्मक है । यदि इनकी तुलना सहिजने की सींक और पत्तों से की जाय तो बहुत कुछ सामान्यता हो सकती है हाँ सहिजने के पत्तों की अपेक्षा श्योनाक के पत्ते बहुत बड़े तथा करञ्ज के पत्ते के समान होते हैं।

बसन्त ऋतु में यह वृक्ष प्रायः पत्र हीन देख पड़ता है । इसकी मोटी सींक पोली होती है। वर्षा ऋतु के पहले ही नई सींक और पत्ते निकल आते हैं। यही समय इसके फूलने फलने का है । नई २ टहनियां निकल कर फूल फल लगते हैं चित्र के जिस टहनी पर फूल और फलियां लगी हैं उस पर विषमवर्ती २ सींकें पत्र सहित हैं पहली सींक पर पत्ते सुसज्जित हैं, किंतु दूसरी सींक के पत्ते विषमवर्ती हैं । इस के फूल केले के फूल के रँग के होते हैं और आकार में केला और सेमर के फूलों से मिलते जुलते हैं। फूलों पर पांच पख ड़ियां और भीतर पांच पीले रंग की तृण केसर होती है। केसर के बीच एक सूक्ष्म कोमल बाल और उस पर एक पत्रवत् जी भी रहती है। फूल बहुधा गिर जाया करते हैं। इस लिये जितने फूल लगते हैं उतनी फलियां नहीं लगतीं। फूलों की कलियां सेमल की कली के समान होती हैं। १—१॥ हाथ लम्बी चिपटी और ३-४ अंगुल चौड़ी तलवार के समान कुछ मुड़ी हुई फलियां लगती हैं। इनके भीतर भौज-

पत्र के समान तहदार पत्र सटे रहते हैं और इन पत्रों के बीच पतले गोल, दुअन्नी के समान हलके बीज होते हैं। प्रायः कलियां और कोमल फलियां कच्ची ही गिर जाया करती हैं। कातिक तथा अगहन के प्रारम्भ तक इस वृक्ष पर फूल फल आते रहते हैं और शीतकाल में फली पकने पर गिर जाती हैं और बीज हवा से उड़ जाते हैं। इन बीजों के गिरनेसे वर्षा ऋतु में पौधे उत्पन्न होते हैं। इनको उठा कर रोपण करके उचित परिचर्य्या करने से वृक्ष सतेज हो खूब बढ़ते हैं इस वृक्ष की जड़ की छाल मोटी ऊपर का भाग सफेद रंग परन्तु भीतर पीली होती है। यही छाल औषधि प्रयोग में विशेष कर आती है। मात्रा १ से ६ माशे।

गुण दोष—कषेला, कड़वा, चरपरा, शीतल, रूक्ष मालरोधक, बलकारी, वीर्य्यवर्द्धक, जठराग्नि को दीपन करने वाला तथा बात, पित, कफ, त्रिदोष, ज्वर, सन्निपात, अरुचि, आमबात, कृमिरोग, वमन, खांसी, अतिसार, प्यास, कोढ़, श्वास और वस्ति रोग का नाश करने वाला है।

सोना पाठे का कच्चा फल—मधुर, कषेला, हलका चरपरा, खारा, गरम, अग्नि प्रदीपक, पाचक, रुचिकारी हृदय और कंठ को हितकारी, तथा कफ, बात, अरुचि, ववासीर वायु गोला कृमि को नष्ट करने वाला है।

सोना पाठेका पका फल—भारी और बात को कुपित करने वाला है।

सोना पाठे का अर्क—रुचिकारी तथा बवासीर वायु-गोला और कृमि रोग को हरन करने वाला है।

प्रयोगः—[१] इसकी जड़ की छाल ही औषधी प्रयोग में अधिक आती है, ग्राही होने से यह अतिसार नाशक है।

(२) अतिसार और आमातिसार में–इसका काढ़ा देना।

(३) पुराने अतिसारपर—पुट पाक की विधी से निकाला हुआ सोना पाठे का रस सेवन करना।

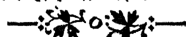
[४] कुटज वृक्ष के पत्तों में इसका पुट पाक बना रस निकाल, उसमें मोचरस का चूर्ण मिला कर देना।

[५] इसका और कूड़ा का रस सम भाग मिला कर सेवन करना।

(६) कर्ण शूल तथा कान की पीड़ा पर—इस के द्वारा तिलों का तेल सिद्ध कर कान में डालना।

(७) गठिया की सूजन पर—इसके काढ़े को गाढ़ा करके लेप करना और चूर्ण की फंकी लेना।

(८) घोड़े और बैलोंके पीठघाव केऊपर —इसको हलदी के साथ पीस कर लेप करना।





काश्मरी (खम्भारी)

४ खम्भारी

स० गाम्भारी, भद्रपर्णी, श्री पर्णी, मधुपर्णिका काश्मीरी काश्मरी इत्यादि, हि० गम्भारी, कुम्भेर खम्भारी, कम्भार, खुमेर खम्भार गंभार गम्हार ब० गामार गामारगाछ म० शीवण शीवण गम्भारी, क० सीवनी गु० सीवन शवन शवन्य, तै० साल्लांगु बुटी चेट्टु, गंभारि पेग्गु मुड्डु प० खम्भारी मा० कुम्भेरण ।

L. Gmilina arboria, Trebia undifloara.

L. Gmilina Rheedi,

विवरण—इसका वृक्ष बहुत विशाल होता है ऊंचाई में कोई वृक्ष ६० फीट से भी अधिक ऊंचा पाया जाता है। है। ऊंचे स्तम्भ पर इसकी शाखें दीख पड़ती हैं। यह वृक्ष प्रायः सब प्रान्तों में कहीं२ पाया जाताहै और अन्यान्य वृक्षों की भाँति यह प्रचुर परिमाण से नहीं मिलता। बंगाल बिहार, संयुक्त प्रदेश तथा शुष्क पहाड़ों में अधिक होता है इसका स्तम्भ सीधा और छाल मोटी होती है छाल का रंग सफेद ताजे में किंचित् हरियाली लिये सफेद तथा सफेदी लिये भूरे रंग की और साफ होती है इससे दूध निकलता है। छोटी छोटी डालियां सफेदी लिये खाकी रंग की और चिकनी होती हैं। इसके पत्ते पीपल के

पत्तों के समान होते हैं परन्तु जिस प्रकार पीपलके सब पत्ते प्रायः एक ही आकार के होते हैं वैसे इसके पत्ते एक आकार के नहीं होते। कोई पत्ता ठीक पीपल के पत्ते के समान पत्र दंड की ओर गोलाकार हो आगे को सिकुड़े हुये अंत में लम्बी नोक वाले, कोई पत्र दंड के जोड़ से सिकुड़ कर बीच में चौड़े हो पुनः सिकुड़ते हुये अंतमें लम्बी नौक सहित और कोई बंगला तथा सांची पानके आकार के अंतमें लम्बी नोक युक्त होते हैं। डंठी की आदिमें छोटे और अंत में प्रायः बड़े पत्ते लगते हैं बड़े पत्ते ८—६ इंच लम्बे और बीच में ३—४ इंच चौड़े होते हैं माघ से चैत तक इसके पुराने पत्ते गिर जाते हैं और चैत बैसाख तक नवीन २ टहनियों सहित नये पत्ते निकल आते हैं। प्रायः यही समय इसके फलने फूलने का है। इसके फूल मंजरियों में पीले रंग के लगते हैं और उन पर भूरे रंग की छींटें होती हैं। फल बहेड़े के समान पर किंचित् लम्बे होते हैं और जेठ असाढ़ तक पककर भूमि में गिर पड़ते हैं। इनके बीजों से पौदे उत्पन्न होते हैं। इन पौधों को उठाकर स्थाई रूप से रोपण और उचित परिचर्य्या करने से वृक्ष तैयार होते हैं। यों तो अनेक प्रकार की लकड़ियों के ढोलक बनते हैं परन्तु इसके काष्ट के बने हुए ढोलक की आवाज़ बहुत प्रिय और सुरीली होती है। कहते हैं कि इस लकड़ी का बना हुआ ढोलक यदि चढ़ा करके खूंटी से लटका दी जावे तो गर्मी के दिनों में हवे की वेग से आप ही आप मीठी आवाज़ निकला करती है।

ऊपर जिस वृक्ष का विवरण और चित्र दिये गये हैं वही वास्तव में गंभारी है और यह भी कहा गया है कि इसका वृक्ष बहुत कम मिलता है। इसके अभाव में जिस वृक्ष को व्यवहार में लाते हैं उसका पंचाग भी उक्त गंभारी के ही समान होता है परन्तु अन्तर यह है कि इसके कोई२ पत्ते-भांट के पत्ते के समान किंचित् आनीदार होते हैं। कोई पत्ता पत्र दंड की छोड़ से गिलोय के पत्ते के समान जड़की ओर कटा हुआ होता है और कोई बराबर होता है। इस के फल भी उक्त गंभारी के फल के समान होते हैं, परन्तु गंभारी का फल किंचित लम्बाई लिये गोल होता है और इसमें लम्बाई नहीं होती। फूलने फलने का समय वही है जो गंभारी का है। यह गंभारी का ही भेद है।

गुण दोष—कषेली, कड़वी, उष्ण वीर्य्य, मधुर, भारी पाचक अग्नि प्रदीपक, मेधा जनक, दस्तावर, स्मरणशक्ति को बढ़ाने वाली, हृदय को हितकारी तथा भ्रम, शोष, त्रिदोष, प्यास व आम शूल, बवासीर, विष, दाह ज्वर और रुधिर विकार का नाश करने वाली है इसकी छाल औषधि प्रयोग में लीजाती है मात्रा ३ माशे से ६ माशे।

गंभारी की जड़—कड़वी बलवर्द्धक मल को ढीला कर ने वाली उदर शूल नाशक तथा ज्वर मन्दाग्नि और सर्वांग जलमय शोथ आदि कई दूसरे रोगों में हितकारी है। यहां पर इसकी जड़ की छाल से तात्पर्य्य है। जड़ अत्यन्त गरम और अहितकारी होती है।

गंभारी के फूल—मधुर शीतलकड़वे ग्राही कषैले पाक में मधुर बातकारी तथा रक्त पित्त और रुधिर विकार नाशक हैं।

गंभारी के फल—पुष्टि कारी बलकारक वीर्य्य वर्द्धक भारी रसायन शीतल स्निग्ध कषैले खरे पाक में मधुर कषैले और खट्टे रसों की शुद्धि करने वाले केशों को हितकारी तथा बात, पित्त, प्यास, रुधिर, को क्षीणता, मूत्राघात, दाह रक्तपित्त, सुजाक रुधिर विकार, आमबात, क्षत, क्षय, और प्रदर रोग को दूर करने वाले हैं।

इसकी मज्जा—शीतल, कड़वी, कषैली, मलरोधक बल कारी वीर्य वर्द्धक वात को बढ़ाने वाली तथा रुधिर विचार कफ, पित्त और प्रदर रोग को दूर करने वाली है।

गंभारी का अर्क—प्यास शूल बवासीर विष दाह और भ्रान्ति का नाश करने वाला है।

(१) प्रयोग—जादू टोना से बचाने के लिये इसकी लकड़ी को गोलाकार बना लड़कों के गले में पहनाते हैं और पशुओं के रोग पर इस लकड़ी का उपयोग किया जाता है।

(२) स्त्रियों के दूध बढ़ाने के लिये—इसकी छाल और मुलेठी के चूर्ण को शक्कर और मधु के साथ सेवन करना।

(३) मूत्र कृच्छ्र की दाह पर—इस के कोमल पत्तों का अर्क पिलाना।

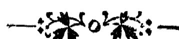
(४) कफ पर—इसके और अडूसे के कोमल पत्तों का रस पिलाना।

(५) उदर कृमि पर—इसकी जड़ का काढ़ा देना।

(६) शीत पर—इसके सूखे फलों को पका दूध के साथ पीस कर पिलाना।

(७) अंगुली के नख सम्बन्धी क्षत पर—इसके कोमल पत्तों को पीस कर लगाना।

(८) पित्त ज्वर में—फलों का काढ़ा पिलाना।





५ पाढ़र

स० पाटिलि, पाटला, अमोघा, मधु, दूती, फलेरुहा कृष्णबृन्ता कुवेराक्षी इत्यादि, हि० पाढ़र, पांडर' पाढ़ल, पांडरि पाढरि, पद, व० पाढ़र गाछ पारुल, म० पाड़ल पाड़लि पाड़ली रक्त पाड़ल गु० काकच राता फूलना पाड़ल क० हादरी, तै० कल गोरु, कलि गोट्ट चेट्ट, कलिगुट्ट उ० पाटुड़ि ता० पद्रि प० पाढ़ल।

L. Stereospermum Suaveolens

L. ,, chelonioides

L. Bignonia Suavcolens

५–(क) पाढ़र श्वेत।

स० श्वेत पाठला, मुष्कक, मोक्षक, घण्टा, पाटलि काष्ठ, पाटला इत्यादि हि० सफेद पाढ़र, (ल, रि, इत्यादि) मोखा, कठ पाड़र व० घंटा पारुल म० मोखा, मोखाड़ा गु० मरखो क० मोख, दलाई, वीलीय, हादरी तै० मोक्कपु चेट्टु मुष्क तुंडु चे।



५–(ख) पाढ़र सफेद छोटी।

स० क्षुद्र पाटला, हि० छोटी सफेद पाढ़र [ल, रि इत्यादि]

दशमूल—



पाटला (पाढ़र)

विवरण—यहां पर यह प्रश्न हो सका है कि जिस प्रकार दशमूल के प्रथम चार वृक्षों के प्रान्तीय भाषाओं के नाम के आगे ही इनका सांगोपांग विवरण किया गया है उस प्रकार इस वृक्ष का क्यों नहीं किया गया इसका उत्तर यही है कि इस वृक्ष की सत्यता में मत भेद है।

पहले हम उस वृक्ष का वर्णन करते हैं जिसको पश्चिम प्रान्तों के ग्रन्थकार तथा वैद्यों ने माना है। यह वृक्ष साधारण वृक्षों के समान ४० फीट से ६० फीट तक ऊँचा होता है और इसके ऊंचे स्तम्भ पर शाखें दीख पड़ती हैं। शाखाओं पर जो टहनियां निकलती हैं उन पर पत्ते आमने सामने लगते हैं। टहनियां एक से दो फीट तक लम्बी हुआ करती हैं। किसी पर दो जोड़े पत्ते किसी पर तीन जोड़े और किसी पर ४ जोड़े होते हैं। अंत वाले पत्ते तीन इंच से ६ इंच तक लम्बे होते हैं। फाल्गुन चैत्र में इसके पुराने पत्ते गिर जाते हैं और चैत्र के अंत तथा वैसाख के आरम्भ तक नये पत्ते निकल आते हैं। यही समय इसके फूलने का है फूल धूसर रंग तथा कुछ किरमिची रंग के होते हैं। और उनसे उत्तम सुगन्धि आती है फल कार्तिक—अगहन तक पक जाते हैं यह वृक्ष हिमालय की तराई ट्रावनकोर ट्रेने सरीम और सीलोन के आर्द्र भागों में होता है। लाल और सफेद फूलों के भेद से यह दो प्रकार का होता है इनमें सफेद फूल वाले वृक्ष की दो जाति हैं एक के बड़े वृक्ष

और दूसरे के छोटे होते हैं । इसके पत्ते बेलपत्र के समान होते हैं । छाल औषधि प्रयोग में आती है । वास्तव में इस वृक्ष को मैंने देखा नहीं इसलिये अधिक वर्णन करने में असमर्थ हूँ ।

कलकत्ते के आयुर्वेद विज्ञान नामक पुस्तक में जिस वृक्ष को पाढ़र माना है उस के पत्ते कसौंदी के पत्तों के समान होते हैं और एक २ सींक पर प्रायः सात २ पत्ते लगे रहते हैं किसी २ पर पांच और किसी पर तीन पत्ते भी देखे जाते हैं । पत्ते आमने सामने जोड़े में लगते हैं और अन्त वाला पत्ता अकेला और सबसे बड़ा होता है सींकों पर आदि वाले पत्ते छोटे और क्रमशः अंत वाले बड़े होते हैं। इस पर लम्बी फलियां लगती हैं ।

बंगाल के कतिपय कविराज महोदय एक दूसरे ही वृक्ष को पाढ़र मान व्यवहार में लाया करते हैं और बंग भाषा में इसी को पारुल कहते हैं । इसके पत्ते टहनियों पर आमने सामने जोड़े में लगते हैं और ये पत्ते कूड़ा [कुटज वृक्ष] के पत्ते के समान लम्बे होते हैं । जिस प्रकार आयुर्वेद विज्ञान वाली पाढ़र के अन्त वाला पत्ता अकेला रहता है, उस प्रकार इसका पत्ता नहीं लगता । इसके अंत वाले पत्ते जोड़े में लगते हैं। निम्न लिखित चित्र इसी वृक्ष की डाली का है । यह डाली स्वर्गवासी श्रीमान् बाबू हरिदास मित्र, बी० ए० बी० एल० काशीपुर कलकत्ता से मुझे प्राप्त हुई थी ।

विहार प्रान्त के वैद्यगण जिस वृक्ष को पाढ़र कहते हैं उसके पत्ते टहनियों पर विषमवर्ती लगते हैं, इसकी छाल सफेद रंग की और मीठी होती है। चित्र नं० १० इसी वृक्ष का है।

कितने वैद्य मोखा वृक्ष को ही सफेद फूल वाली पाढ़र समझते हैं क्योंकि "पाढ़र" सफेद के पर्याय, वाची संस्कृतादि अनेक नाम जो ऊपर दिखलाए गए हैं. मोखे के नामों से मिलते हैं। परन्तु मोखा और सफेद पाढ़र एक ही वृक्ष नहीं है। मोखे का वृक्ष पथरीली ज़मीन तथा पर्वतों पर उत्पन्न होता है। इस का आकार ढाकवृक्ष (पलास) के समान होता है। पत्ते बड़े होते हैं और इनसे आक के समान दूध निकलता है और फल घंटाकार लगते हैं। यह सफेद और काला दो प्रकार का होता है।

सफेद पाढ़र का वृक्ष ३०-४० फीट तक ऊंचा होताहै यह कमाऊं के पहाड़ पर मध्य और दक्षिण हिंदुस्तान तथा राजपूताना आदि कई प्रान्तों में पाया जाता है। इसका स्तम्भ सीधा होता है और उस पर अनेक शाखा प्रशाखा होती हैं। इसके पत्ते डालियों की सींकों पर तीन चार जोड़े लगते हैं। वृक्ष प्रायः कई महीनों तक पत्र विहीन दीख पड़ता है इसके नये पत्ते निकल आते हैं माघ से चैत्र तक यह वृक्ष फूलता फलता है। रात्रि के समय इसके फूलों से सुगंधि अधिक आती है। इसकी फलियां २ इंच लम्बी और ऊपर से खरदरी होती हैं उन पर उठे हुए कुछ सफेद दाग होते हैं और डालियों से यह लटकती रहती है वृक्ष की छोटी

टहनियें भूरे रंग की होती हैं और इसकी छाल खाकी रंग की होती है यही छाल औषधि प्रयोग में आती है।

गुणदोष—कड़वी, चरपरी, गरम, कषेली, स्वादिष्ट तथा अरुचि; सूजन, रुधिरविकार, श्वास, प्यास, बमन, कफ, रक्तपित्त सन्निपात, बात, अफरा और त्रिदोष नाशक है। मात्रा ३ से ६ माशे पर्य्यन्त।

पाढ़र के फूल—कषैले, मधुर, शीतल, स्वादिष्ट, हृदय को हितकारी तथा कफ, वात, पित्तातिसार. दाह, पित्त और रुधिर विकार को नष्ट करने वाले हैं।

पाढ़र के फल—शीतल, भारी, कषैले; कड़वे, मधुर तथा सुजाक 'रक्तपित्त, हिचकी, और वायु का नाश करने वाले हैं।

पाढ़र का अर्क—वमन सूजन, रुधिर विकार, प्यास, दाह, अरुचि को दूर करने वाला है।

प्रयोगः—(१) यह प्रायः दूसरी औषधियों के साथ मिलकर व्यवहार में आती है। इसकी भस्म से क्षार का पानी बनाया जाता है।

(२) हिचकी पर—इसके फूलों के चूर्ण को मधुके साथ चाटना। फलों के रस में मधु और स्वर्ण भस्म मिलाकर पिलाना। इसके फल और फूलों के चूर्ण को पानी के साथ सेवन करना।

(३) गर्भवती स्त्री की वातज पीड़ा पर—इस को और सोंठको पानी में पीस, गरम कर, शीतल होने पर पिलाना

[४] अग्नि दग्ध व्रण, व्रण स्राव, दाह और वि-स्फोटक पर—इसके काढ़े में सिद्ध किया कड़वा तेल लगाना

पाढ़र सफेद के गुण दोष:—कड़वी, भारी, गरम, सुगन्धित, तथा बात, कफ, परिश्रम, वमन, हिचकी अरुचि, सूजन, श्वास को दूर करने वाली है।

प्रयोग:—(१) इसके रसमें ६ माशे सोंठ का चूर्ण और दो तोले मिश्री मिलाकर सेवन करने से अम्लपित्त का नाश होता है

पाढ़र छोटी के गुण दोष:—स्निग्ध, घाव को शोधने वाली तथा कफ, मेद, कोढ़, विष विकार और मंडल कुष्ठ को नाश करने वाली है।

---

६ सरिवन

स० शालपर्णी, शालिपर्णी, स्थिरा, सौम्या, त्रिपर्णी, अंशुमती इत्यादि, हि० सरिवन, सालवन, शालवन, गौरीसर, दिंघरौथ, व० शालपानि, शालपान,छालानी म० शाल वण, सालवण डाव, प० सरिवन, समेर, क० भुई शेवंरा, भुइ सेवरा, मुरुवल होने, मूरुल होन्ने, मुरुले होन्ने, काड गांजि, तै० सप्पा कुपोब, सप्पा कपोवा, शिया कुपना, मुय्या कुपोन्ना, उ० शारपाणि।

L. Desmodium Gangeticum.

L. Hedysarum gangeticum.

सरिवन क्षुप जाति की वनोषधि ३—४ फीट ऊंची होती है इसका क्षुप और प्रान्तों की अपेक्षा कोकण, बंगाल और मध्य प्रदेश में अधिक पाया है। इसके पत्ते डेढ इंच लम्बी डंडियों पर बेल के पत्ते के समान एक २ सींक पर तीन २ लगते हैं। ये पत्ते कालापन लिये हरे रंग के होते हैं। डंडियां पौधे पर विषमवर्ती २–३ इंच के फासले पर लगी रहती हैं और डंडियों की जड़ के पास पुष्प कोष के समान हरियाली लिये लाल रंग के कोमल धनहरे लगे रहते हैं। इनके भीतर का सार भाग अंकुर के समान दीख पड़ता है। टहनियों के अन्त के भाग ओंगा के समान ८—९ इंच तक फूल और फलियों के गुच्छे से भरे रहते हैं।



शालपर्णी ।

ग्रीष्म ऋतु के सिवाय प्रायः सब ऋतुओं में इसके फूल फल देखे जाते हैं। फूल छोटे २ आसमानी रंग के और फलियां चिपटी, पतली, प्रायः आध इंच से पौन इंच लम्बी होती हैं और ये ६ से आठ सूक्ष्म दानों से जड़ी रहती हैं। यह जंगल झाड़ियों में आपसे आप उत्पन्न होता है। गर्म्मी के दिनों में इसके पत्ते और कोमल टहनियों को बकरी आदि पशु खाया करते हैं इसलिये उन दिनों इसके पौधे पत्र विहीन सूखे समान प्रतीत होते हैं। बर्सात के पानी पड़ने पर जड़ों से नवीन टहनियां निकल कर फिर पौधे तैयार हो जाते हैं। विशेष कर इसकी जड़ औषधि प्रयोग में आती है और इस के अभाव में पंचांग ही ग्रहण करते हैं। जहां यह प्रचुर परिणाम से नहीं मिलती वहां बसन्त ऋतु में इसको जड़ से काट कर संग्रह करना चाहिये, क्यों कि ऐसा करने से दूसरे साल इन्हीं जड़ों से पौधे तैयार हो कर फिर से संग्रह करने के लायक हो जाया करते हैं।

—:o:—

६—[क] सरिवन भेद।

जहां पर उक्त सरिवन नहीं मिलती वहां अच्छे २ वैद्यवर इसीको व्यवहार में लाते हैं और इसके गुण भी उपरोक्त सरिवन के समान हैं। यह क्षुप जाति की वनौषधि प्रायः सब प्रान्तों में बारहो मास पाई जाती है। इसका क्षुप ४—५ फीट तक ऊंचा होता है। कहीं २ इससे भी अधिक ऊंचा

देखने में आता है। इसकी डंडी पतली और मजबूत होती है जो हाथों से खींच कर उखाड़ने से प्रायः जड़ से टूट जाया करती है। डंडियां सीधी खड़ी नहीं रह कर झुकी हुई रहती हैं। पत्ते विषमवर्ती प्रत्येक गांठ पर सींक सहित एक २ लगते हैं और ये एक समान नहीं होकर छोटे बड़े होते हैं इनका आकार सरिवन के पत्ते के समान होता है कोई नोकीला और कोई नोक रहित गोलाई लिये रहते हैं डंडियों के अंत में हलके गुलाबी रंग के सूक्ष्म फूल लगते हैं ज्यों २ ये फुनगियां बढ़ती जाती हैं त्यों २ आगे को फूल लगते जाते हैं और पीछे पतली २ चिपटी फलियां भी लगती जाती हैं। ये फलियां १॥ इंच तक लम्बी और किंचित् टेढ़ी होती हैं एवम् ८—९ इंच डालियों पर चारों ओर से सटी हुई सुहावनी दीख पड़ती हैं। इनका एक किनारा सीधा और दूसरा कटा हुआ अर्ध गोलाकार दिखलाई देता है और प्रत्येक के भीतर एक २ सूक्ष्म बीज होता है शीत ऋतु में फलियां पक कर गिर जाया करती हैं पौधे के पत्ते तथा कोमल टहनियों को पशु खाया करते हैं और ग्रीष्म ऋतु में वे पौधे फूल फल तथा पत्र विहीन होजाते हैं एक दो पत्ते किसी २ पर देखने में आते हैं वर्षा का पानी पड़ते ही नई २ टहनियां निकल कर बसांत में ये पौधे हरे भरे होजाते हैं पुरानी टहनियों के पत्तों की अपेक्षा नई टहनियों के पत्ते बड़े हुआ करते हैं। एवम् नये पौधे के

पत्ते भी बड़े होते हैं शीत ऋतु की गिरी हुई फलियां पानी पड़ने पर अधिकांश सड़ गल जाती हैं। कोई २ अंकुरित होकर पौधे रूप में प्रगट होती हैं. दशमूल की प्रथा से इसकी जड़ ही व्यवहार में लेनी चाहिये परन्तु सैकड़ों वृक्ष नष्ट करने पर भी आवश्यकतानुसार जड़ प्राप्त करना कठिन होजाता है इसलिये जहां अधिक खर्च है वहां इसका पंचांग ही लेते हैं। शीतकाल इसके संग्रह का अच्छा समय है। पौधे को जड़ से काट कर रख लेना चाहिये। भूमि में जो शेष जड़ बच जाती है, उसी से बसांत में पौधे फिर तैयार हो जाते हैं।

यह जंगल, झाड़ी, बांस के खेत इत्यादि में आप ही आप उत्पन्न होती है, बंगाल, विहार और मध्य प्रदेश में अधिक पाई जाती है।

गुणदोष—कड़वी, स्वादिष्ट, भारी, गरम, रसायन, धातु वर्द्धक, शुक्रजनक, पुष्टिदायक, रस काल में कड़वी तथा विष, वमन, ज्वर, श्वास, अतिसार, शोष, क्षत, कास, कृमि रोग, विषमज्वर, वात, प्रमेह, बवासीर, सूजन, संताप और त्रिदोष का नाश करने वाली है। मात्रा—२ से ४ माशे।

प्रयोग (१)—यह स्वतन्त्र औषधि प्रयोग में कम आती है, परन्तु दूसरी औषधियों के साथ इसका गुण तीव्र हो जाता है।

(२) प्रतिश्याय में—इसका काढ़ा देना।

(३) सूर्य्यावर्त में—इसके काढ़े की ३—४ बूंद नाक में टपकाना।

(४) गरम तेल से उत्पन्न हुए दग्ध पर—इसकी पुरानी जड़ तथा टहनियों की राख को पानी में गाढ़ी घोल कर लेप करना।

(५) इसकी जड़ को पानी से पीस नाभि वस्ति और भग पर लेप करने से मृत गर्भ तथा मूढ़ गर्भ बाहर निकल आता है।

(६)ज्वर में—चिरायते और इसकी जड़ का काढ़ा देना।

(७) घाव पर—इसकी जड़ को पानी से पीस कर लेप करना।



पृष्ठिपर्णी (कोरपत्ता वाली)

७ पिठवन

स० पृश्निपर्णी, पृथक्पर्णी, चित्रपर्णी, अंघ्रिपर्णी, क्रोष्टु-बिन्ना, सिंहपुच्छी, इत्यादि, हि० पिठवन, पिटोनी, पिठौनी, दौला, पितबन, पीतवन, व० चाकुले, चाकुलिया, म० सेवरा पिठवण, प० पिठोनी, पिठौनी, मा० पिठवन, गु० नहानो, समेरवो, गधा समेरवो, क० नरियल बोने, तोरे मोर, तै० कोल कुपोला, कोलाकुपन्ना, कोला कोपेन्ना, कोलपोम्न, उ० ऋष्ट पर्णि, ऋष्टपर्णी, को० भाल, डावला, डावड़ा, दे० भद्र सेंवरा ।

L. Hemionites Cordifolia, Uraria lagopoides.

L. Doodia lagopodioides, Uraria picta.

विवरण—पिठवन क्षुप जाति की वनौषधि प्रायः एक हाथ ऊंची होती है । यह अलमोड़ा, नैपाल, बंगाल, ब्रह्मा, पंजाब की ओर तथा अनेक प्रान्तों में पाई जाती है। भिन्न २ प्रदेशों में भिन्न २ प्रकार के क्षुप को पृश्न पर्णी कहते हैं, यहां पर जिसका विवरण किया जाता है उसी को प्रायः कई प्रान्तों के वैद्य पिठवन मान व्यवहार में लाते हैं । इसके पत्ते वेल पत्र के समान त्रिदल होते हैं और ये विषमवर्ती

सींकों पर लगते हैं। पत्ते गोल, बीच में चौड़े और दोनों ओर सिकुड़े हुये वेल के पत्तों के आकार के होते हैं । प्रत्येक सींक पर जो तीन पत्ते एक साथ रहते हैं उन में प्रथम दो पत्ते आमने सामने और बीच के पत्ते से कुछ छोटे होते हैं। सब पत्ते आकार में एक समान नहीं होते, वरन श्वेत पुनर्नवे के पत्तों के समान छोटे बड़े हुआ करते हैं । सींक और डांट की जोड़ से प्रशाखा निकलती हैं। इनके पत्ते उक्त पत्र से छोटे होते हैं । प्रायः बसन्त ऋतु में डंडियों के अंत में जटा निकलती है यह पहले बाजरा के नव अंकुरित बाल के समान छोटे और हरे रंग के होते हैं। कुछ बढ़ने पर इससे क्रम २ से नीलापन लिये छोटे २ फूल निकलते हैं। ग्रीष्म ऋतु में जटा पक जाती हैं और छोटे २ गोल सफेद रंग के बीज भूमि पर झड़ जाते हैं।

जिन महानुभावों ने स्वर्गीय पण्डित शंकरदासजी शास्त्री पदे संग्रहीत वनौषधि विज्ञान का अवलोकन किया होगा उन्हों ने पृष्ठ संख्या ८० में इसका चित्र भी देखा होगा इसके पत्र हरे और रेशे काले दीख पड़ते हैं परन्तु कोई उद्भिज मात्र के पत्ते की रेशें काली नहीं होती और रेशे भी इस प्रकार प्रविष्ट हैं जो इसके पत्र से मिलान करने से बहुत अंतर जान पड़ता है। जटा भी रंग हीन होने से, रंगीन पत्तों के ऊपर ठीक नहीं सुहाती। हमने चाहा था कि चित्रों को आप के ऊपर सामने रंगीन रक्खें, परन्तु समय के हेर फेर से ऐसा करने से

असमर्थ हैं। इसका जो चित्र निघंटु रत्ना कर में है, ठीक वही चित्र रंगीन रूप में उक्त ग्रन्थ में विराज मान है।

मेरा सिद्धान्त है कि जो चित्र बने वह खूब स्पष्ट हों जिस में अनभिज्ञ जन भी चित्रों के सहारे वनौषधियों को ढूंढ़ने पर यह जान सकें यदि वैद्यवरों की कृपा होगी तो मैं प्रत्येक वनौष-धियों के चित्र स्पष्ट रूप से निज लिखित रूप निघंठु, में देसकूंगा।

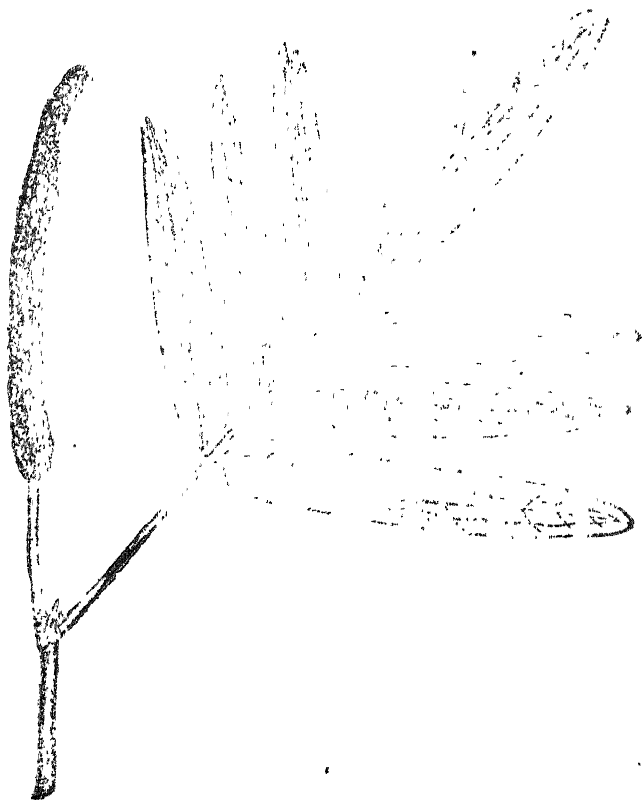
७–(क)पिठवन भेद।

अब मैं उस पिठवन का वर्णन करता हूं जिसको विहार चंपारन, बंगाल, बनारस, आदि प्रान्तों के वैद्यगण व्यवहार में लाते हैं। यह उक्त प्रान्तों के जंगल झाड़ियों में तथा बांस के पुराने खेतों में अधिक मिलती है। चिकित्सक चूड़ा-मणि, कविवर, पण्डित चंद्रशेखरधर मिश्र राजवैद्य रत्नमाला, वगहा, चम्पारन ने इसी पिठवन को अपनी वाटिका में लगा रक्खा है श्रीमान् पण्डित ब्रजबिहारी चौवे राजवैद्य बांकीपुर पटना इसीकी प्रशंसा किया करते हैं। यह किसी प्रकार उक्त पिठवन से हींन गुणवाली नहीं है। इसका क्षुप उक्त पिठवन की समान एक—डेढ़ हाथ तक ऊंचा होता है। जब इसके बीज अंकुरित होते हैं तब इसके पत्ते उक्त पिठवन दीख पड़ते हैं, किन्तु जब इस के पौधे कुछ बढ़जाते हैं तब पत्तों का आकार भी बदल जाता है। ग्रन्थकारों ने इसके विषय में यों लिखा है पत्ते गोल बेलदार सिंह की पुच्छ की समान लम्बे और चित्र विचित्र होते हैं, और फूलगोल, सफेद किंचित् नीलापन लिये

जटा सहित लगते हैं"। पौधेपर सींकें उक्त पिठवन के समान विषमवर्ती लगती हैं प्रत्येक सींकपर सात २ पत्ते (तीन जोड़े और एक छोड़ पर) लगते हैं: किसी २ सींक पर पांच ही पत्ते देखे जाते हैं। ये पत्ते अंगुली के समान लम्बे चोड़े और बहुत खरदरे होते हैं। जब ये बाल्यावस्था में रहते हैं तब गहरे हरे रंग और बीच का हिसा सफेदी मायल होता है, परन्तु ज्यों २ ये पुराने होते जाते हैं त्यों २ इनका रंग फीका पड़ता जाता है और अंत में किंचित् हरियाली लिये खाकी रंग के होजाते हैं किंतु बीज का हिस्सा सफेद ही रहता है। इसकी जटा और फूल उक्त पिठवन के समान ही होते हैं। बर्सात के अन्त तक, इसकी जटा पककर, उन से छोटे २ सफेद रंग के बीज निकल कर आने लगते हैं। जाड़े के दिनों में यह क्षुप तेज हीन और पत्र भंग दीख पड़ता है और प्रायः सूखा सा प्रतीत होता है किन्तु इसकी जड़ भूमि के भीतर सजीव रहती है। इससे जो बीज गिरते हैं वे बर्सात का पानी पाकर अंकुरित होते हैं।

जो पोधे उत्पन्न होते हैं उनको तैयार होने में एक वर्ष से दो वर्ष लगता है। बसन्त ऋतु में पुरानी जड़ों से नवीन अंकुर निकल कर फिर पौधे तैयार होजाते हैं। इसकी भी जड़ ही औषधि प्रयोग में लेनी चाहिए परन्तु सैकड़ों वृक्षों को समूल नष्ट करने पर भी अर्थ सिद्ध होते नहीं दीखता, इसलिये इसका पंचाङ्ग ही लेते हैं। बसन्त ऋतु तथा ग्रीष्म ऋतु में जब

दशमूल—



पृश्निपर्णी (लम्बे पत्ता वाली)

पौधे पूर्ण तैयार होजाय, तब इसकी भूमि में घुसी हुई जड़ को छोड़ कर पौधे काट लेने पर फिर दूसरे साल इन्हीं जड़ों से पौधे तैयार होजाते हैं।

उपरोक्त दोनों प्रकार की पिठवन को वैद्यों ने गुणों की परीक्षा करके सफलता प्राप्त की है यह दोनों एक जाति की ही प्रतीत होती हैं। परन्तु कोकण और गुजरात देश वासी अपने यहां के भिन्न २ क्षुप को पिठवन मानते हैं।

कोकण देश वासी जिस क्षुप को पिठवन कहते हैं उसका पौधा २—२॥ हाथ ऊंचा होता है पत्ते दोहरे बरछी-नुमा, डंठल के पास सिकड़े और बीच में किंचित खंड देकर ऊपर की ओर चौड़े होते जाते हैं। ये पत्ते ५—६ अंगुल लम्बे होते हैं ऊसर भूमि में इसके क्षुप अधिक पाये जाते हैं इन पर चिपटी और किंचित् मरोड़ दार फलियां लगती हैं।

गुजरात की पिठवन नदी किनारे ३—४ फीट ऊंची बड़े २ वृक्षों की छाया में उत्पन्न होती है इस के पत्ते विषमवर्ती ऊपर नीचे २—३ इंच लम्बे और एक डेढ़ इंच चौड़े होते हैं ऊपर की ओर सुंदर और चिकने होते हैं पर नीचे की ओर सूक्ष्म रोएं सहित रहते हैं। इस पर वर्षाऋतु के अंत में छोटे २ लाल फूलों के गुच्छे लगते हैं और सफेद रंग की जोड़ बाली सी में लगती हैं और इनके भीतर लोबिया के समान बीज होते हैं।

उपरोक्त दोनों प्रकार की पिठवन का हमारा अनुभव कुछ नहीं है, इसलिये इनके गुणों के विषय में मुझे कुछ भी कहना नहीं है। यदि उक्त प्रान्तों के वैद्यवर एकर चुपको छाया में शुष्क कर मेरे पास भेजने की कृपा करें तो इन के भी चित्र "रूप निघन्टु" में दे सकूंगा। यह बहुत अच्छी बात होती यदि वैद्यगण उपरोक्त चारों प्रकार की पिठवन को संग्रह कर उनके गुणों की परीक्षा करके यह निश्चय करते कि इनमें सर्वोत्तम कौन है।

गुण दोष—गरम, मधुर, दस्तावर, कड़वी, चरपरी वीर्य्य वर्द्धक तथा त्रिदोष, श्वास, दाह, ज्वर, प्यास, वमन वातरक्त, उन्माद और घाव को दूर करने वाली है मात्रा २ से ४ माशे।

पिठवन का अर्क—ज्वर, स्वास, रक्तातिसार, और दाह का नाश करने वाला है।

प्रयोग—(१) पिठवन बहुधा दूसरी औषधियों के साथ व्यवहार में लाई जाती है।

(२) विषम ज्वर—में यह हितकारी है, और निर्बल मनुष्यों के लिये इसका काढ़ा गुणदायक होता है।

(३) प्रतिश्याय पर—इसकी जड़ और मिश्री का काढ़ा देना।

(४) प्रसवकाल की वेदना—पर इसको पीसकर नाभि, वस्ति और योनि पर लेप करने से बालक सुखपूर्वक और शीघ्र उत्पन्न होता है।

(५) बत्सनाभ के विषपर—इसके ४ तोले स्वरस में मिश्री मिलाकर पिलाना।

[६] और उसी प्रकार सर्प विष पर इस के पत्तों का रस लाभकारी होता है।

(७) गर्भिणी स्त्री के रक्त पित्त, कामला, सूजन, खांसी श्वास और ज्वर—में पिठवन, वरियारा, और अडूले का रस अथवा काढ़ा पिलाना।

———:o:o·———

८ वनभंटा, वृहती

सं० वृहती, वार्ता की, क्षुद्रभंटा की, मेपती. कुलि, हिंगुली, राष्ट्रिका, सिंही, इत्यादि हिं० वनभंटा, वनभांटा भटकटैया, बड़ीकटाई, वरहंटा, सरहंटा, वनवैंगन, जंगलीवैंगन, कटाई, बड़ी कटाई, बड़ी कटेरी, वरहड़ा, व० व्याकुडत्तिबैगन व्याकुल, म० डोरली, रानवांगी थोर डोरली, गु० उमीरिंगणीं, उमीमोरिंगणी, बम्बई० डोरलीबिंगनी, तै० कुकमाची, कुकुमाची, पेद्दा मुलंगा, मुलक, ता० चेरुचुंट क० गुल्ला, य० ममोली बड़ी, मा० उभीकटाली, फा० उस्तगार, बांदंजान् , जंगली, वांद्जान दस्ती; अ० बालुंजान् , जंगली, वादंजान्वरों हद्क।

E. Solanum Jequinii

L. Solanum Indicum, Solamum violarum

विवरण—वनभंटा क्षुपजातिकी बनौषधि है। इसका क्षुप १–१॥ हाथतक ऊंचा होता है और प्रायः सब प्रान्तों के जंगल झाड़ियों में कहीं न कहीं पाया जाता है।

इसका क्षुप ठीक भंटे के क्षुप के आकार का होता है, पत्ते और फूल भी भंटे ही के समान होते हैं, एवम् समस्त क्षुप

दशमूल—



बृहती (बड़ी कटेरी)

पर भंटे के समान कांटे होते हैं। पर भंटे के कांटों से इसके कांटे सघन और तीक्ष्ण होते हैं। पत्ते विलम वर्ती लगते हैं। पत्ते और डंठल के जोड़ों के बीच से शाखा निकला करती हैं इन शाखाओं के पत्ते कुछ छोटे छोटे होते हैं। इन्हीं शाखाओं के पत्ते की जड़ से पुष्प कोष निकलते हैं और प्रफुल्लित होने पर आकार और रंग में ठीक भंटे के फूल के समान, बैंजनी रङ्ग के होते हैं। फूल पांच दल वाले और इनके भीतर केसर होती है। इसकी कई जाति हैं। उन में बड़े और छोटे फलों के भेद से यह दो प्रकार का होता है। बड़े के फल आमला के बराबर तथा कंटकारी के फल के समान सफेद छींटे सहित कच्चे में हरे और पकने पर पीले पड़जाते हैं। छोटे का क्षुप भी बड़े के समान ही होता है, परन्तु पत्ते किंचित् लम्बे और इसपर कांटे अधिक होते हैं। कहीं २ इसका क्षुप तीन हाथ से भी अधिक ऊंचा और झाड़दार होता है। इसके फूलफल झूमकों में लगते हैं। फूल बड़े वनभंटे के समान और फल मटर के समान गोल २ कच्चे में हरे और पकने पर नारंगी रंग के हो जाते हैं। दोनों ही के फल भूमि की ओर लटके रहते हैं। ठेट भाषा में बड़े को सरहंटा और छोटे को बरहंटा कहते हैं। प्रायः बड़े ही को औषधि प्रयोग में लेते हैं इसकी जड़ के अभाव में पंचांग लेते हैं। बाटिकाओं में भी लगाते हैंदोनों ही के बीज लाल मिरच के समान होते हैं प्रायः बरसात के अंत में ये बीज अंकुरित होते हैं और जाड़े के दिनों में पौधे तैयार हो फूलते

फलते हैं। बसन्त ऋतु तक बहुधा सब फल पक जाते हैं और ग्रीष्म ऋतु में गिर जाते हैं। बड़े फल वाले बनभंटा के अभाव से छोटा बनभंटा श्वेत वर्ण का होता है। इसका झाड़ बड़ा होता है, फूलों में सफ़ेदी होती हैं और इस पर कांटे कम होते हैं।

गुणागुण—चरपरा, कड़वा, पाचक, मलरोधक, हृदय को हितकारी, गरम, तथा कफ, बात मुख की विरसता मल, अरुचि ज्वर, आमदोष, खांसी, श्वास, हृदय रोग, कोढ़, वमन, कृमि, खुजली, शूल, और मन्दाग्नि का नाश करने वाला है।

वनभंटे के फल—कड़वे, चरपरे, तथा खुजली, कोढ़, कृमि, कफ और बात को दूर करने वाले हैं।

वनभंटा छोटा (क्षुद्रबृहती)—वात, श्वास, शूल, कफ, मंदाग्नि, ज्वर, वमन और आम को नष्ट करने वाला है।

वनभंटे का भेद—कड़वा, चरपरा, गरम, रूखा, रुचि-कारक, भेदक, पाचक, अग्निदीपक, पित्त जनक, तथा कफ, और वात को दूर करने वाला है।

वनभंटे का अर्क—ज्वर, मुख की विरसता, मलदोष, अरुचि, और शूल का नास करने वाला है।

बनभंटा सफेद—स० श्वेत बृहती, हि० सफेद [वन भंटा कटाई इत्यादि] व० सादा बृहती, क० बिलिय गुल्लु, बम्बई पाढ़री हेरली।

गुणदोष—रुचिकारी तथा कफ, और वात का नाश करने वाला है। इसको आंजने से आंख के अनेक प्रकार के रोग नष्ट होते हैं। इसका शेष गुण वनभंटे के समान हैं।

बनभंटे के यूनानी मतानुसार गुणदोष—दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, इसके फल का लेप कफज शोथ को लय कारक और लाभकारी, इसका खाना खांसी और श्वास, को नाशक, विदाहिता प्रद, पाचक, इसके पत्ते बवासीर को लाभकारी, इसकी जड़ का चूर्ण लाल शक्कर और गाय के दूध के साथ बलवान स्तंभ कर्ता तथा व्याकुलता उत्पन्न कारक, दर्पनाशक सिकंजवीन, प्रतिनिधि, अश्तरखार मात्रा ३ माशे।

प्रयोगः—(१) यह अकेले औषधि प्रयोग में बहुत कम आता है तो भी कभी २ इस को अकेला ही प्रयोग में लाते हैं;

(२) **दांतों की पीड़ा पर**—इसके फल का धूम्र पान करना।

(३) **वृक्क के रोग और मूत्रकृच्छ्र पर**—इसका २॥ छटांक काढ़ा दिन में दो बार पिलाना।

(४) **समय पर बालक शीघ्र उत्पन्न होने के लिये** इसका काढ़ा पिलाना।

(५) **काक और श्वास पर**—इसकी एक तोले जड़का काढ़ा सेवन करना।



९ कण्टकारी

स० कण्टकारी, दुःस्पर्शा, क्षुद्रा, निदिग्धिका, कण्टालिका, कण्टकिनी, धावनी, बृहती इत्यादि, हि० कटेरी, लघुकटाई, छोटी कटाई, भटकटैया, रेंगनी, रिंगणी कटाली, कटयाली, व० कंटिकारी, म० रिंगणी, भूई, रिंगनी, लघुरिंगनी, गु० बेठी, भोरिंगणी, बेटी, भोरिंगणी, क० नेल्ल गुल्लुमुल्लु चिरगुल, तै० खेटी मुलंगा, ब्राकुडिकेट्टु, बरकुडु, उ० कंटमारिष, मा० कंटाली प० कंडयाली, महोकरी, छमकन वोली; ममोली कटेरी, द्रा० कनकत्तरि यू० कटीला, रिंगनी।

E, Wild eggs plant

L. Solanum Jaequinii, Solenum xunthocur-pum.

L. Solanum Janthoearpum. Solenum xuntho

विवरण:—कंटकारी को कोई क्षुप मानता है क्योंकि इस की छोटी २ शाखें ऊपर को खड़ी रहती हैं, परन्तु वास्तव में यह प्रसर जाति की बनोषधि पृथ्वी पर छत्त के समान फैली हुई रहती है। प्रायः सब प्रान्तों में और सब प्रकार की मिट्टी में पाई जाती है, परन्तु रेतीली भूमि में यह अधिक होती है, इसकी शाखें प्रशाखें खूब फैलती हैं, फूल फल अधिक देती है और जड़



कंटकारी छोटी कटेरी।

मोटी होती है। इस के छत्ते कहीं २ दो तीन हाथ के घेरे में देखे जाते हैं। इसका कोई अंग कांटे से खाली नहीं रहता। इस के पत्ते ऊंट कटेरे के पत्ते के समान तीन इंच से ८ इंच लम्बे, एक इंच चौड़े बीच२ में दोनों ओर कटे हुए और तीक्ष्ण कांटों से भरे रहते हैं। ये पत्ते शाखाओं पर विषमवर्ती लगते हैं। पत्र दंड की जड़ से प्रशाखा निकलती हैं और उसी पर फूल फल लगते हैं। इसका फूल और फल बनभंटे के फूल और फल के आकार और रंग का होता है। इस के बीज भी बनभंटे के बीज के समान होते हैं। वह बरसात के अंत में अंकुरित हो जाड़े के दिनों में फूलती फलती है, गर्मी में इस के फल पक जाते हैं और प्रायः बरसात में इसका प्रसर गल जाता है।

सफेद फूल वाली भी कंटकारी होती है. जिसका वर्णन आगे किया जायगा।

गुण दोषः—कडवी, चरपरी,दीपन, हलकी, रूखी, गरम पाचक, दस्तावर तथा खाँसी, श्वास, ज्वर, कफ, बात, पीनस, पार्श्वशूल. कृमि और हृदय रोग नाशक है।

कंटकारी का फल—पाक और रस में चरपरा, कड़वा, भेदक, अग्नि प्रदीपक, हलका, वीर्य को हानिकारक तथा खुजली प्रमेह और ज्वर को दूर करने वाला है। गरम होने से यह श्वास, खाँसी, बात और कफ नाशक है।

कंटकारी का अर्क—अग्नि प्रदीपक तथा कफ और सूजन को दूर करने वाला है।

यूनानी मतानुसार गुण दोषः—गरम और रूक्ष, पाचक क्षुधाकारी, स्वभाव को मृदुकर्ता, गंध ज्ञानशक्ति के मिथ्या होजाने को गुण कारक तथा कृमि, वायु, ज्वर, पार्श्वशूल, मूत्र-कृच्छ्र, कास और श्वास को लाभकारी है एवम् गरम प्रकृति वालेको हानिकारक **दर्प नाशक** धनियां और कपूर, **प्रतिनिधि** अंजीर, मात्रा २ से ३ माशे जड़।

प्रयोग (१) पेट शूल पर—इसकी जड़ का काढ़ा देना।

(२) पैरों के दाह और फफोले पर—इस को पीस कर लेप करना।

(३) दन्तपीड़ा पर—फल की धूनी देना।

(४) ज्वर में—इसका काढ़ा देना।

(५) पेट के शूल और पित्त रोग पर—माखन निकाला हुआ दूध में नमक डाल, इसके बीजों को औटाय, सुखा कर रात भर मठा में डुबो रक्खे, दिन में सुखावे, इस प्रकार पांच वार कर घी में तल कर सेवन करना।

(६) पित्त शोथ और सूजन पर—बीजों को पानी में पीस कर लेप करना।

(७) प्रतिश्यायमें—इसका काढ़ा पिलाना।

(८) ऋतु ज्वरमें—इसकी जड़ पित्तपापड़ा और गिलोय का काढ़ा देना।

(९) मूत्रकृच्छ्र पर—इसकी जड़ को अधकचरा कर रात भर पानी में भिगो प्रातःकाल मल छान मिश्री मिलाकर पिलाना

(१०) यकृत में—इसका काढ़ा देना।

(११) कीड़ों के खाए हुए दन्त पीड़ा पर—इस के पंचाङ्ग के स्वरस के कुल्ले करना।

(१२) अपस्मार पर—इसका दूध नाक में टपकाना।

(१३) नेत्र पीड़ा में—पत्तों की टिकिया बना आँख पर बाँधना। इस का रस आँख में टपकाना।

(१४) नकसीर—में जड़ को पानी के साथ पीस कर तालू पर लगाना, अथवा पत्ते और जड़ का रस कान में डालना

(१५) विष पर—इसको पीसकर लगाना।

(१६) नाड़ीव्रण—पर फल को पीस उसमें फाया भिगो कर बांधना।

(१७) **शिर शूल पर**—फलों के रस का ललाट पर लेप करना।

(१८) **दारुण रोग में**—फलों के रस में सम भाग तैल सिद्ध कर लगाना।

(१९) **मूत्रकृच्छ्र में**—इसके स्वरस में मधु मिलाकर सेवन करना।

(२०) **मूत्राघात में**—ईख के स्वरस और तक्र को वस्त्र में छानकर पिलाना।

(२१) **अपस्मार में**—इसकी जड़ और भांग के बीज सम भाग बालक के मूत्र में पीस नाक में टपकाना।

(२२) **धुंध और जाला पर**—जड़ को नीबू के रस में पीस कर अंजन करना।

(२३) **ध्वज भंग पर**—बीजों को पीस इन्द्री पर मल कर एरंड के पत्ते बांधना।

(२४) **सर्प दंश में**—इसकी जड़ को पीसकर पिलाना।

(२५) **अपस्मार में**—इसके पत्ते का रस नाक में टपकाना।

(२६) **कफ, खांसी पर**—इस का काढ़ा देना, चूर्ण को मधु के साथ सेवन करना।

(२७) वातज कास और मन्दाग्नि पर---इस के और गिलोय के एक २ सेर स्वरस में एक सेर घी सिद्ध कर सेवन करना।

(२८) खांसी में--इसके काढ़े में पीपल का चूर्ण मिला कर पिलाना।

(२९) बालकों के सब प्रकार की खांसी में--इस के फूलों की केसर के चूर्ण को मधु के साथ चटाना।

---

९ (क) कंटकारी सफेद

स० चन्द्रहासा श्वेत कराटकारी इत्यादि हि० सफेद कंटकारी (कंटाई, रेंगनी इत्यादि) म० श्वेत रिंगणी क० विलिय नेल्ल गुल्लु।

विवरण--सफेद कंटकारी के ही समान होती है इसके पत्ते कांटे और प्रसर सब एक समान होते हैं, केवल, फूल सफेद होता है। यह बहुत कम मिलती है। दक्षिण के देशों में और चटगांव में कहीं २ पाई जाती है।

गुणदोष--चरपरी, गरम, अग्नि प्रदीपक, गर्भ को देने वाली, नेत्रों को हितकारी, पारे को बांधने वाली, रुचिकारी तथा

कफ और वात का नाश करने वाली है इसके शेष गुण कंटकारी के समान हैं।

सफेद कंटकारी का अर्क--गर्भ कारक; पाचन तथा कफ और खांसी को हरने वाला है।

प्रयोग (१) नेत्र रोग में--अंजन के साथ इसको मिला कर आंखों में आंजना।

(२) गर्भाधान के लिये--पुष्प नक्षत्र के दिन इसकी जड़ को लाकर कन्या के हाथ से पिसवा गौ के दूध में मिलाकर ऋतु स्नान के पीछे स्त्री को पिलाना।

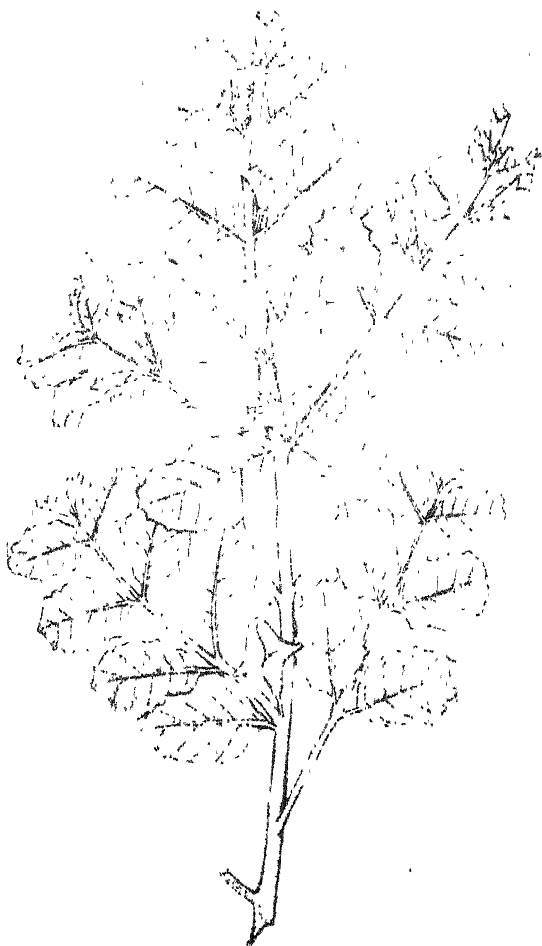
---

१० गोखरू

बड़े और छोटे फलों के भेद से गोखरू दो प्रकार का होता है, इनमें बड़ा क्षुप जाति की बनस्पति और छोटा प्रसर जाति की वनौषधि है। पहले दोनों ही के एक साथ प्रान्तीय भाषाओं के नाम और गुण दोष कह, फिर भिन्न २ विस्तार से वर्णन करेंगे।

स० गोक्षुर, क्षुरक, त्रिकंण्ट, स्वादु कण्टक, गोकण्टक, बनश्रृङ्गाट, स्वदंष्ट्रा, इक्षुगन्धिका इत्यादि, हि० गोखरू, गोखलू,

दशमूल—



गोखुर (गोखुरू बड़े)

गोरल, गोखुला, हरचिकार, हाथी चिकार व० गोत्तुरी, गोखुरी म० सराटे वेडिली, सराटी, क० दोड्डनेग्गिलु, वेडिती सराटी नेग्गुलु, गु० गोखर तै० पलेरु, उ० गोखरा, गोखुरा, मा० नेरिंजिल प० भकड़ा, मकड़ा, जमोया, भसखड़ा, फ़ा० ख़रे ख़सक, तुख़्मे ख़ार खस्क, तुख़्मख़ार ख़सक अ० वज़र उल खसक, बज़रुल् खस्क, वकलतलखार खसूक, हसक।

E. Zygophylleaee, L. TribulasLamoeginosus
L Bedalum Muresn, Tribúlas terestris,

गुण दोषः—गोखरू दोनों प्रकार के—शीतल, मधुर, बृंहण, बलकारी, रसायन वस्ति शोधक, वीर्य्य वर्द्धक, पुष्टिकारी, अग्नि प्रदीपक, स्वादिष्ट तथा मूत्रकृच्छ्र, पथरी, प्रमेह, दाह, श्वास, खांसी, हृदय रोग, बवासीर, वस्ति, वात त्रिदोष, कोढ़ और शूल को दूर करने वाला है।

गोखुरू के बीज—शीतल, बृष्य मूत्र जनक, आयु को बढ़ाने वाले तथा सूजन शुक्रमेह और सुजाक का नाश करने वाले है।

गोखुरू का खार—मधुर, शीतल, छिद्रों को शुद्ध करने वाला, वीर्य वर्द्धक, तथा वात नाशक है।।

गोखुरू का अर्क—पथरी, प्रमेह, सुजाक, हृदय रोग, और वात नाशक हैं।

यूनानी मतानुसार गुणदोष—दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, मूत्र और आर्तव प्रवर्त्तक, वृक्क और वस्ति की अश्मरी का नाशक, प्रकृति को मृदु कारक, अपानवायु निस्सारक, कमर की पीड़ा, जलोदर, और वातज गुल्म को गुणकारी आर्तव प्रवर्त्तक; और शोथ को लाभकारी, तथा तिल्ली को हानिकारक, दर्पनाशक, बादाम प्रतिनिधि—खीरे और ककड़ी के बीज, मात्रा ३ से ६ माशे। पर्यन्त

गोखुरू का शाक—वृष्य, कड़वा, और छिद्रों को शुद्ध करने वाला है।

गोखुरूँ के शाक का यूनानी मतानुसार गुणदोष—दूसरे दर्जे में रूक्ष, प्रकृति को मृदुकारक, द्रव रुधिर को उत्पन्न कारक, अधोवायु निस्सारक, रस को अशुद्ध कर्ता, रक्त शोधक, मूत्र और आर्तव प्रवर्त्तक, इसके ताजे रस का फोड़ प्रमेह और मूत्र दाह को लाभकारी; इसका लेप शोथ के दाह को गुणकारी तथा यह तिल्ली को हानिकारक, दर्प, नाशक नमक प्रतिनिधि कुलफे का साग।

१०—(क) गोखुरू बड़ा

स० गोक्षुर इत्यादि हि० बड़ा गोखरू इत्यादि, वनसिंघाड़ा, दक्षिणी गोखरू, दखिनी गोखरू, पहाड़ी गोखरू।

E.Burweed

विवरण—बड़ा गोखुरू क्षुप जाति की वनौषधि है, यह हिन्दुस्तानके दक्षिण में समुद्र के किनारे, सीलोन गुजरात, काठियावाड़, राजपूताना, विन्ध्याचल, आदि प्रान्तों की रेतीली तथा पथरीली भूमि में अधिक होता है। इसका क्षुप झाड़दार चकबड़ के क्षुप के समान होता है। डालियां और पत्ते बहुत लसदार होते हैं। पत्ते लम्बे किंचित् गोल, अनीदार और दल-दार होते हैं। जड़ पीली, सिन्दूरिया रंग की और फल चौखुंटे, प्रायः एक इंच लम्बे, चारों कोनों पर एक २ कांटे सहित, नीचे का भाग चारों ओर से सिमटा हुआ एक कोने में आ मिलता है। इसके कच्चे फल का रंग हरा, पकने पर पीला, और सूखजाने पर मटिया रंग होजाता है इसका छिलका तंतुओं का जालीसा दीख पड़ता है। बाज़ार में यह बहुत मिलता है।

बड़ा गोखरू—गुणों में गोखरू के समान और अधिक तथा श्रेष्ठ गुण वाला होता है। जहां पर गोखरू का प्रयोग लिखा है वहां इसी का व्यवहार करना चाहिये।

प्रयोग—(१) **मूत्रमार्ग** और **मूत्राशय की अधिक गर्मी** पर इसके पत्तों का लुआब पिलाना, इससे मूत्र शीघ्र आता है।

(२) **मूत्र की रुकावट** और **मूत्रकृच्छ्र** पर इस के फल और पत्तों का लुआब पिलाना।

(३) स्वप्न प्रमेह वीर्य्य के स्वतः निकलने और इन्द्रियों की निर्बलता में—इसका सेवन करना।

(४) पुष्टि के लिये—इसके चूर्ण में लौंग, इलायची, मिश्री और घी मिलाकर दूधके साथ सेवन करना।

(५) तिल्ली—पर इसके पत्तों को पीसकर पिलाना।

(६) वृक्ककी अधिक ऊष्मा पर—इसके पत्तों को पानीमें भिगो उनकालुआव निकाल कर पिलाना।

(७) पथरी—पर पाषाण भेद और इसका काढ़ा वा फांट पिलाना।

(८) मासिक धर्म को शुद्ध करने के लिये इसके फलों का काढ़ा पिलाना।

(९) इसके काढ़े से प्रसव के बाद गर्भाशय के दूषित जलादि निकल जाते और प्रसूत सम्बन्धी रोग दूरहोते हैं।

[१०] पित्त रोगपर--इसकी जड़ का काढ़ा देना।

[११] आमवात और कटि शूल पर--गोखुरू और सोंठ का काढ़ा पिलाना।

[१२] मूत्रकृच्छ्र पर--इसके काढ़े में जवाखार मिला कर पिलाना।

[१३] मूत्र शुद्धि के लिये--इसके पंचांग और ककड़ी के बीजों को कांजीमें पीसकर बस्ति पर लेप करना।

[१४] पथरी पर--इसके चूर्ण को मधु में मिला भेड़ी के दूध के साथ सेवन करना।

[१५] मूत्रकृच्छ्र--और उष्णवायु पर इसके पंचांग के काढ़े में मधु और मिश्री मिलाकर सेवन करना।

---

१० [ख] गोखरू छोटा

स० क्षुद्र गोक्षुर, गोक्षुरक इत्यादि, हि० देशी गोखरू, गोखुला इत्यादि, व छोट गोखरी म०सराटे मा० गोखरू कांटी गु० बेठो गोखरू तै०नेग्गिलु, क०नेज्जुल मुल्लु द्र० शेप्पु नेरिं जिल।

L. Terrestris. T, lanuginosus

विवरण:—छोटा गोखरू प्रसर जाति की वनौषधि है यह प्रायः सब प्रान्तों में पाया जाता है, विशेष कर बंगाल विहार; पश्चिमोत्तर प्रदेश, अवध, राजपूताना और मद्रास अहाता में अधिक उत्पन्न होता है इसके प्रसर २–२॥ बिलस्त से २–२॥ हाथ के घेरे में भूमि पर पसरे हुए रहते हैं। सूखी भूमि की अपेक्षा सरस भूमि के गोखरू के प्रसर खूब घने

और लम्बे फेलते हैं। इनके फल भी कुछ बड़े हुआ करते हैं। इसके पत्ते इमली के पत्ते के समान पर इमली के पत्ते से कुछ छोटे होते हैं। डंडियों के दोनों ओर १-१॥ इंच के अंतर पर एक २ सींक रहती है और प्रत्येक सींक पर पांच से छः जोड़े पत्ते लगे रहते हैं। पत्र दंड की लड़ और डंडियों के बीच में फूल फल लगते हैं। फूल छोटे २ पांच पखड़ी वाले पीले रङ्ग के होते हैं। वर्षा ऋतु से प्रायः कार्तिक अगहन तक फूलता फलता है इसके फल छोटे २ गोल और किञ्चत् चिपटे होते हैं और उनपर पांच जोड़े बारीक कांटे लगे रहते हैं। फल पांच दल वाले होते हैं और सूखने पर प्रायः पांचों दल त्रिकोणाकार पृथक २ होजाते हैं और उनके दोनों छोड़ पर एक २ कांटे होते हैं। बहुधा वसन्त ऋतु तक इसके फल तथा पत्ते और डंडियों के कुछ भाग गिर जाते हैं। डंडियां कुछ लाल रंग की दीख पड़ती हैं ग्रीष्म ऋतु के शेष भाग तथा वर्षा के आरम्भ में वे ही फिर से अंकुरित हो पसरते हैं और बीजों से नवीन प्रसर उत्पन्न होते हैं। यदि वाटिका में रोपण करना हो तो चैत्र का महीना इसके बीजों को बोने के लिये अच्छा समय है।

गुण दोषः—छोटे गोखुरू के गुण गोखरू के समान हैं परहीन गुण वाले होते हैं। बड़े गोखुरू की प्रतिनिधि में इसी को लेना चाहिये।

प्रयोगः—(१) विशेष करके इसके फल औषधि प्रयोग

में आते हैं और इसकी जड़ तथा पंचाङ्ग भी प्रयोग में आता है।

(२) वन्ध्यापन पर—फलों के चूर्ण की फंकी स्त्री को सेवन कराना।

(३) मूत्रकृच्छ्र पर—इसके पंचागकाहिम देना।

(४) मूत्रवृद्धि के लिये—गोखरू और मिश्री के ६-६ माशे चूर्णकी फंकी ताजी जल के साथ देना।

(५) पांच तोले गोखरू और ७॥ माशे धनियां अधकचड़ा कर २॥ पाव पानी में अर्द्धावशेष काढ़ा बना दिन में कई बार थोड़ा २ करके पिलाना।

(६) मूत्राशय की पुरानी सूजन पर—इसके फल और पत्तों का काढ़ा दिन में तीन चार वार करके पिलाना।

(७) मूत्रनली की दाहपर—इसके ताजेफल और पत्तों का स्वरस २॥ से ५ तोलेकी मात्रासे दिनमें तीन वार पिलाना।

(८) पुराने मूत्रकृच्छ्र पर—इसके फल और पत्तों के काढ़े में १० बूंद चन्दन का तेल डालकर सेवन करना।

(९) प्रमेहपर—गोखरू और समभाग मिश्री का सेवन करना।

(१०) पुरुषार्थ बढ़ाने के लिये-गोखुरू और शतावर का काढ़ा देना।

(११) पथरीपर—इसके चूर्ण को मधु के साथ चाटकर बकरी का दूध पीना।

(१२) पित्तकी शान्ति के लिये-इसका शर्वत पिलाना।

(१३) मूत्रकृच्छ्र पर—इसके चूर्णमें मिश्री और मिरच मिलाकर सेवन करना।

॥ समाप्त ॥

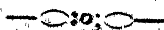
अखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन से स्वर्णपदक प्राप्त और
भारतवर्षीय वैद्य सेवासमिति से सार्टीफिकेट प्राप्त
युक्त प्रांतीय प्रथम वैद्य सम्मेलन द्वारा
निर्धारित प्रस्तावानुकूल अनेक
वैद्य वैद्यराजों द्वारा
प्रशंसित



श्रीधन्वन्तरि-कार्य्यालय विजयगढ़

के कार्य विभाग का

दिग्दर्शन



संस्थापक—

स्वर्गीय लाला नारायणदास राधावल्लभजी वैद्यराज

जनरल मैनेजर—

वैद्यभास्कर—बाँकेलाल गुप्त सम्पादक धन्वन्तरि,
आयुर्वेद समाचार श्रीधन्वन्तरि कार्य्यालय
पो० विजयगढ़ जि० अलीगढ़

मैनेजर—वैद्यराज पं० नारायणदत्तशर्मा सम्पादक वैद्यराज

स्टेशन का पत्ता—रतीका नगला बी. बी. एण्डसी. आई. रेलवे

तार का पता—"धन्वन्तरि" रतो का नगला।

धन्वन्तरि कार्य्यालय के उद्देश्य

१—आयुर्वेदीय सिद्ध औषधियों को शास्त्रीय प्रक्रियासेबना वैद्य, हकीम और धमार्थ औषधालय के स्वामियोंको तथा डिस्ट्रिक्टबोर्ड के औषधालयों को व सर्वसाधारण को स्वल्प मूल्य में देने के लिये एक वृहत् प्रयोगशाला स्थापित करना।

२—आयुर्वेदीय मासिक, साप्ताहिक पत्रों को निकाल वैद्यों में एवं सर्वसाधारण में जागृति उत्पन्न करना।

३—आयुर्वेदीय प्राचीन और नवीन पुस्तकें नवीन ढङ्ग से लिख और लिखाकर प्रकाशित करना।

४—रोगियों को चिकित्सा के लिये डाक्टरी अस्पताल के ढंग का आरोग्यभवन स्थापित करना।

५-आयुर्वेदीय विद्यालय और पुस्तकालय खोलना खुलवाना।

६- भिन्न २ प्रांतोंमें उत्पन्न वनौषधियों का संग्रह करना और वैद्यों को स्वल्प मूल्य में भेजना।

उपरोक्त उद्देश्यों की सिद्धि के लिए निम्नलिखित विभाग स्थापित हैं

———*———

मासिकपत्र विभाग का	पूरा पता	श्री	धन्वन्तरि	कार्य्यालय
पुस्तक	,,	श्री	,,	पुस्तकालय
प्रेस विभाग	,,	श्री	,,	प्रेस
औषधि विभाग	,,	श्री	,,	औषधालय
चिकित्सा	,,	श्री	,,	चिकित्सालय
वनौषधि विभाग	,,	श्री	,,	वनौषधालय

१ श्री धन्वन्तरि कार्यालय—

इस विभागसे पहले 'आरोग्यसिन्धु' नामक एक आयुर्वेदीय मासिक पत्र स्व० वैद्यराज राधावल्लभजी के सम्पादकत्व में दो वर्ष निरंतर प्रकाशित होता रहा था कई एक कारणों से उसे बंद करना पड़ा और उसके बाद धन्वन्तरि नामक मासिक पत्र प्रकाशित होता रहा। पहला आरोग्य सिन्धु कैसा पत्र था। इसके लिये यह कह सकते हैं कि उसकी फाइल मंगाकर देखिए जिसका मूल्य २) दो रुपया है पोस्ट व्यय प्रथक है तब आपही कहदेंगे कि पत्र आयुर्वेदीय वैद्यक पत्रोंमें से एकही पत्र था उस की प्रशंसा अनेक विद्वान् वैद्यों और सहयोगियों ने की थी अब तीन पत्र प्रकाशित हो रहे हैं जिसमें धन्वन्तरि और आयुर्वेद समाचार मासिक हैं और वैद्यराज साप्ताहिक है यह पत्र कैसे हैं इसके लिये भी विनीत भाव से निवेदन है कि एक अंक नमूना स्वरूप मुफ्त मंगा देखिये जिससे आपको मालूम हो जाय कि पत्र कैसे हैं वार्षिक मूल्य धन्वन्तरि ४) आयुर्वेद समाचार १) वैद्यराज ३) हैं।

२—श्रीधन्वन्तरि पुस्तकालय—

विज्ञ वैद्यों से यह बात छिपी नहीं है कि वर्तमान समय में आयुर्वेदीय साहित्य बड़ी गिरी दशा में है। जिस विद्या का साहित्य रूपी कोश पूर्ण नहीं होता उसकी कभी उन्नति नहीं हो सकती आयुर्वेदीय चिकित्सा को उच्चशिखर पर बैठाने की कामना करने वाले महानुभावों को पहले इसके साहित्य को पुष्ट करना चाहिये। हिन्दी भाषा में आयुर्वेदीय साहित्य के अनेक अनुपम रत्न प्रकाशित नहीं हुए और न उसकी व टिका

में नई २ पुस्तक रूपी पुष्प ही खिलते हैं इसही विचार को लेकर हमने अपने कार्य्यालय में साहित्य विभाग भी रक्खा था और उसका उद्देश्य था कि आयुर्वेदीय नवीन शैली से लिखी उत्तमोत्तम पुस्तकें और अप्रकाशित प्राचीन ग्रंथ जो उपयोगी हों प्रकाशित किए जांय इसी उद्देशानुसार इस विभाग ने अब तक २७ पुस्तकें प्रकाशित की हैं जिनमें ९ पुस्तकें स्व० वैद्यराज राधावल्लभजी सम्पादक आरोग्यसिंधु द्वारा लिखित हैं पुस्तक इतनी उपयोगी लिखी गई थीं कि उनकी प्रशंसा अनेक विद्वान वैद्यों के अतिरिक्त अनेक पत्र सम्पादकों ने मुक्त कण्ठ से की है और अ०भा० वैद्य सम्मेलन के सभापति श्री पं० जगन्नाथप्रसाद जी शुक्ल सम्पादक सुधानिधिने रौप्यपदक प्रदान कियाथा इस विभाग में अपनी प्रकाशित पुस्तकों के अतिरिक्त और भी वैद्यक की उत्तमोत्तम पुस्तकें अन्य स्थानों से मंगा कर संग्रह की गई हैं तथा जो महाशय अपनी लिखी पुस्तकें हमारे द्वारा प्रकाशित कराना चाहें वह पुस्तक भी उत्तम होने हर प्रकाशित की जा सकेगी आशा है कि वैद्य महानुभाव पुस्तकों का सूचीपत्र मुफ्त मंगाकर और पुस्तक खरीद कर हमारे उत्साह को बढ़ावेंगे।

३—श्रीधन्वन्तरि चिकित्सालय—

इस विभाग से स्थानीय और बाहिर से आये हुए रोगियों की चिकित्सा की जाती है बाहिर के रोगियों के लिए स्थानादि का प्रबंध अभी पूर्ववत ही है पर आरोग्य भवन आयुर्वेदीय अस्पताल के लिये जमीन लेली गईहै जिसकी बिलडिंग बनजाने पर बाहिर के और स्थानीय रोगियों के लिये डाक्टरी अस्पताल के समान सब प्रकार का प्रबंध हो जायगा जो रोगी यहां नहीं

आसकते अथवा अपने यहां वैद्य को भी नहीं बुला सकते वह पत्र द्वारा अपने रोग के सब लक्षण ब्यौरे वार हाल लिख भेजे उनके पत्र आने पर इस विभाग से रोग व्यवस्था और औषधि योजना करदी जाती है इस विभाग के वर्तमान चिकित्सक श्रीमान् वैद्यराज बांकेलाल जी गुप्त आयुर्वेदाचार्य सम्पादक धन्वन्तरि, आयुर्वेद समाचार, वैद्यराज, ने अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त की है उन्हें उत्तम चिकित्सा के लिये वैद्य भास्कर की उपाधि और स्वर्ण पदक हिज होलीनेश श्री १०८ गोस्वामी द्वारिकाप्रसाद देव वैष्णवाचार्य जी से प्राप्त हुआ है अनेक सभा समितियों से पदक और प्रशंसा पत्र मिले हैं तथा आप अनेक सभा समितियों के पदाधिकारी एवं सभ्य हैं। विशेष हाल जानने के लिये श्रीधन्वन्तरि चिकित्सालय की नियमावली मुफ्त मंगा कर देखिये।

४—श्री धन्वन्तरि वनौषधालय—

चिकित्सा के लिये जिस प्रकार सिद्ध औषधियों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार औषधि बनाने के लिये वनस्पतियों की आवश्यकता है यदि यही वनस्पति नकली सड़ी गली पुरानी वार्य्यहीन होंगी तो उनके द्वारा बनाई हुई औषधि भी गुणहीन होगी यही बात विचार कर हमने उत्तम नई वनस्पतियों का संग्रह किया है जो वनौषधियां संदिग्ध हैं उनका निर्णय भिन्न २ प्रांतीय वैद्यों की सहायता करके व्यवहार में लाते हैं। इसी प्रकार हमने दशमूल की औषधियों का अन्वेषण किया है और दशमूल पर एक निबन्ध भी लिखवाया गया है जिसके लेखक श्रीयुत बाबू रूपलाल जी वैद्यको युक्त प्रांतीय वैद्य सम्मेलन द्वारा रौप्यपदक भी प्रदान किया गया है। हम आशा करते हैं कि आप को यदि वनौषधि की आवश्यकता होगी तो इस कार्य्यालय

से मंगावेंगे और जो औषधियां आपके यहाँ पैदा होती हों उन का सूचीपत्र और भाव लिख भेजेंगे। विशेष जानने के लिए बनौषधियों का सूचीपत्र मुफ्त मंगा देखिये।

५--धन्वन्तरि औषधालय--

इस विभाग में सर्व प्रकारकी आयुर्वेदीय औषधियां शास्त्रीय प्रकियानुसार बनती हैं। हमने जब इस विभाग को स्थापित किया था तब ही अपने उद्देश्य शास्त्रीय औषधियाँ स्वल्प मूल्य में सर्व साधारण को देने का निश्चय किया था। तथा औषधियां बहुत उच्च पद्धति, हाईस्टेण्डर्ड के ऊपर बनाई जांय—इसका ध्यान रक्खा था। यही कारण है इस कार्य्यालय को भारतवर्ष के प्राय: सब ही वैद्य प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखते हैं और सहयोग रखते हैं इस कार्यालय की बनी औषधियों में निम्नलिखित विशेषतायें हैं।

औषधियां बनाने में सब वस्तु उच्च श्रेणी की ली जाती हैं बनस्पतियां गली, सड़ी, पुरानो गुणहीन नकलो और सस्ते भाव की न लेकर उत्तम नवीन औषधियां ली जाती हैं इस हेतु हमने बनौषधि विभाग स्थापित किया है जिसमें अनेक प्रान्तों से बनौषधियां मंगाकर संग्रह को जाती हैं कारण बाजार में औषधियां सड़ी गली पुरानी गुणहीन मिलती हैं।

(२) औषधियां बनाते समय परिश्रम और मूल्य का ध्यान न रख गुणशाली बनें इसका ध्यान रक्खा जाता है।

(३) ग्रंथों के पाठ में लिखी हुई औषधि आदि वस्तु जहां तक मिल सकती है वहां तक प्रतिनिधि का व्यवहार नहीं किया जाता।

(४) शास्त्रों में लिखे अनुसार हीनवीर्य औषधि होने पर व्यवहार में न लाकर फेंकदी जाती हैं।

(५) जो औषधियां पुरानी होने पर विशेष लाभप्रद हो जाती हैं उन्हें हम अधिक परिमाण में बनाते हैं। उल्लिखित विशेषताओं के कारणही इस कार्य्यालय की प्रसिद्धि और उन्नति हुई है इस विभाग का कार्य्य बढ़ जाने से दो विभाग किए गये हैं। (प्रथम खंड) खेरीज भाव से सर्व साधारण को उचित दाम में औषधियां मिलती हैं जिसका सूचीपत्र प्रथक् छपा है देखिये। तथा द्वितीय खण्ड थोक भाव (व्यापाराना भाव) से डाक्टर हकीम और वैद्य लोग आयुर्वेदीय शास्त्रोय औषधियां अल्प मूल्य में खरीद सकते हैं और अपने औषधालय से बेव लाभ उठा सकते हैं जो औषधियां कठिन परिश्रम और बहुत सा धन व्यय करने पर भी बहुत समय में बनती हैं उन्हें वे इस औषधालयसे थोड़ा नफा दे खरीद सकते हैं जो वैद्य औषधियों को तैयार नहीं कर सकते या बहुतसी औषधियों के बनाने में रुपया नहीं लगा सकते वे हमारे औषधालय से सर्व प्रकार की थोड़ी २ औषधियां खरीद अपना कार्य चला सकते हैं। जो वैद्य ऐसे स्थानों में रहते हैं जहाँ औषधियां बनाने में परिश्रम के साथ२ खर्च भी अधिक पड़ताहै वे हमारे यहांसे इकट्ठी औषधि मंगाकर अपना औषधालय चला सकते हैं। हमारे यहां की औषधियाँ शास्त्रीय प्रक्रियानुसार विश्वसनीय बनती हैं और विश्वास के लिये यही कह देना पर्याप्त होगा कि अखिल भारतवर्षीय वैद्य सेवासमिति ने सर्टीफिकट हमारे यहांकी औषधियों की परीक्षा कर प्रदान किया है फिर भी हम प्रतिज्ञा करते हैं कि यदि हमारे यहां की औषधियां ठीक प्रक्रिया से न बनी हों या आपके पसन्द न आवें तो हम को समझाकर और उचित

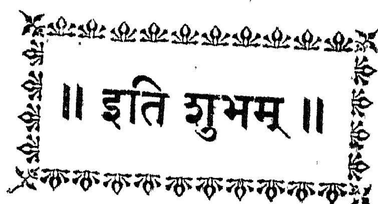
परामर्श देकर तथा जो त्रुटि हो उन्हें सहर्ष वापिस लेंगे तथा आपके परामर्श औरलिखी त्रुटियों पर ध्यान देंगे । आशा है कि वैद्य महानुभाव इस प्रवन्ध से प्रसन्न होंगे और थोक भाव का सूचीपत्र मुफ्त मंगाकर समुचित लाभ उठावेंगे ।

धन्वन्तरि प्रेस—

इस विभाग से ग्राहकों को सब प्रकार की छपाई रङ्गीन व सादी तथा चित्रों वाली उत्तम और खूबसूरत करदी जाती है। छपाई के लिये अनेक प्रकार के टाइप वौर्डर ब्लाक मंगाकर रक्खे गये हैं । छपाई का नमूना यही है । यह इसी प्रेस का छपा हुआ है। एकबार कोई काम भेज परीक्षा कीजिए। छपाई समय पर सस्ते भावमें करदी जाती है ।

पता—मैनेजर धन्वन्तरि औषधालय

विजयगढ़ अलीगढ़ ।



केवल कवर, मिशन प्रेस, इलाहाबाद